द्वितीय अध्याय
सिनेमा का उद्‌भव और हिंदी सिनेमा का विकासक्रम

2.0 भूमिका

2.1 सिनेमा का उद्‌भव

2.2 भारत में सिनेमा का उद्‌भव और विकास

2.3 हिंदी सिनेमा का विकासक्रम

2.3.1 स्वतंत्रतापूर्व हिंदी सिनेमा

2.3.2 स्वातंत्र्योत्तर हिंदी सिनेमा

2.3.3 समानांतर हिंदी सिनेमा

2.3.4 मुख्यधारा का हिंदी सिनेमा

2.3.5 भूमंडलीकरण के आरम्भिक दौर में हिंदी सिनेमा

2.3.6 इक्कीसवी सदी में हिंदी सिनेमा

2.4 निष्कर्ष

द्वितीय अध्याय

'सिनेमा का उद्‌भव और हिंदी सिनेमा का विकासक्रम'

2.0 भूमिका -

सिनेमा फ्रान्स की देन है । ल्यूमिएरे बंधुओं ने दुनिया में पहली बार अपना पहला फिल्म शो पेरिस में दिसम्बर, 1895 में किया था और उसके केवल छह महिने के बाद ही मनोरंजन की यह नई हवा भारत में आ गई । भारत में सिनेमा का प्रवेश 7 जुलाई, 1896 में हुआ था । मुंबई के काला घोडा स्थित वाटसन होटल में ल्युमिएरे बंधुओं ने अपनी फिल्मकला का प्रदर्शन किया था । सिनेमा भारत में आया तो इस नई विधा को लेकर यहाँ के कई लोग सक्रिय हो गये । सर्वप्रथम 1910 में एक फिल्म दिखाई गई 'द लाईफ ऑफ क्राइस्ट' यह फिल्म विदेश से आयी और भारत में दिखाई गई । दादासाहब फालके ने अपने जीवन की यह पहली फिल्म देखी । यही वह फिल्म थी जिसने दादासाहब को उस समय की चर्चित कहानी 'राजा हरिश्चंद्र' पर फिल्म बनाने के लिए प्रेरित किया ।

इस तरह भारत में सिनेमा का आगमन बहुत पुराना नहीं है । अपने सौ सालों के छोटे-से सफर में ही भारतीय सिनेमा में कथ्य से तकनीक तक में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ है। ''भारत के विशेष संदर्भ में देखने पर प्रतीत होता है कि फ्रान्स में अविष्कृत इस कला ने भारतीय परिवेश में स्वयं को इस प्रकार ढाला है कि आज विश्व सिनेमा में वह अपनी विशिष्टता के कारण अपना अलग स्थान रखती है । भारतीय संस्कृति, परिवेश में रच-बस कर निखरी इस कला के इस संक्षिप्त इतिहास में विभिन्न पड़ाव आए है और अनेक परिवर्तनों से होकर आज हिंदी सिनेमा ने 'बॉलीवुड' का नया नामावतरण ग्रहण किया है ।''[1]

इस अध्याय में हम विश्व परिदृश्य में सिनेमा का उद्‌भव देखते हुए हिंदी सिनेमा के उद्‌भव और विकासक्रम पर प्रकाश डालेंगे ।

2.1 सिनेमा का उद्‌भव -

सिनेमा का उद्‌भव फ्रान्स में हुआ । यह कुछ अचानक नहीं हुआ । सिनेमा के उद्‌भव के बीज हमें विज्ञान के आविष्कारों में मिलते है । विश्व सिनेमा की नींव फोटोग्राफी के अविष्कार के साथ ही सन् 1820 ई. में 'अप्टिकल खिलौने' के रूप में रख दी गई थी । स्थिर छायाचित्र कैमरे के आविष्कार के बाद, सन् 1850 ई. में फ्रान्स के टारनाकॉन ने फ्रान्सीसी कहानियों का उपयोग छायाचित्रों के माध्यम से करने के बारें में सोचा । टारनाकॉन ने कहानियों के भावों को उजागर करने के लिए रेखा-चित्रों को माध्यम बनाया ।फिर उन रेखा-चित्रों के छाया चित्रों के रूप में अपने 'स्टील फोटोग्राफ कैमरे' की सहायता से क्रमवार रूप में फोटो लिये और मंच पर उसका प्रदर्शन किया । कथा-वाचक के रूप में किसी के आवाज के माध्यम से उन कथाओं को चित्रों के साथ मिलाते हुए दर्शकों की बहुत प्रशंसा प्राप्त हुई ।अपने इस प्रयासों के कारण टारनाकॉन फ्रान्स के सुप्रसिध्द छायाकार के रूप में मशहूर हो गए । इस प्रकार सिनेमा के उद्‌भव की दिशा में टारनाकॉन द्वारा कैमरे के कलात्मक उपयोग को पहला कदम माना जाता है । टारनाकॉन ने यह दिशा दिखाई कि यदि फोटो श्रृंखला का कलात्मक उपयोग किया जाए तो इनके माध्यम से कहानी कही जा सकती है । फ्रान्स के अन्य छायाकार भी टारनाकॉन के इस प्रयास से प्रेरणा पाकर इस दिशा में तरह-तरह के प्रयोग करने लगे । फिल्म कला के जन्म की दिशा में सृजनात्मक प्रयोगों का सिलसिला आगे बढ़ने लगा ।

फ्रान्स के एक कल्पनाशील छायाकार जान्सेन ने सन् 1873 ई. में एक अद्‌भुत कैमरे का निर्माण किया जिसे 'फोटोग्राफिक राइफल्स' के नाम से जाना गया । अपने इस अनोखे आविष्कार को जब उन्होंने फ्रान्स के 'अकॅडमी ऑफ साइंस' में लोगों के सामने प्रदर्शित किया तो देखनेवाले इसे देखकर हक्के-बक्के रह गए। जान्सेन के इस प्रयास से सिनेमा के जन्म की दिशा में और प्रगति हुई । फ्रान्स के मर्सी ने सन् 1888 ई. को एक ऐसे कैमरे का आविष्कार किया जिसके द्वारा एक सेकेंड में कुल बीस चित्रों का क्रमवार छायांकन किया जा सकता था । लेकिन समस्या यह थी कि उन दिनों फोटो में उपयुक्त

होनेवाले रीलों और उनके पॉजेटिव्स के किनारों में छिद्र नहीं होने के कारण उन तस्वीरों को एक निश्चित दूरी से शृंखलाबध्द रूप में, सिनेमा की तरह प्रदर्शित नहीं किया जा सकता था। लेकिन मर्सी की इस समस्या का समाधान सन् 1890 में अपने आप हो गया जब जॉर्ज ईस्टमेन द्वारा 'सेल्युलॉयड' का व्यवसायिकरण होना प्रारंभ हुआ, मर्सी ने इसका फायदा उठाते हुए मानव शरीर के विभिन्न भागों द्वारा होनेवाले संचलन के अध्ययन के लिए अपने विशेष रूप से विकसित किए कैमरे द्वारा चलचित्रों का निर्माण करना आरम्भ कर दिया । इस प्रकार सिनेमा के जन्म की आधारभूत कल्पना ने मूर्त रूप ले लिया । मर्सी के इस अनोखे प्रयोग से प्रेरणा लेते हुए फ्रान्स के तत्कालीन कई छोटे-बड़े छायाकारों ने चलचित्र निर्माण की दिशा में नए नए प्रयोग करने आरम्भ कर दिए थे । इसी शृंखला में, एक जादूगर द्वारा मंच पर प्रस्तुत किए गए जादुई करतबों का सन् 1893 ई. में फ्रान्स के डेमिनी द्वारा छायांकित कर, लघु फिल्म का निर्माण किया । लोगों ने जब इसे देखा तो उनके आश्चर्य की सीमा नहीं रही । इस तरह सिनेमा अधिक सृजनात्मक रूप लेने लगा था ।

सन् 1893 ईं. में डेमीनी के साथ मिलकर लियॉन ने एक साठ एम.एम. के कैमरे का आविष्कार किया जो विभिन्न प्रयोगों से गुजरते हुए सन् 1896 तक उपयोगी हो सका । इस कैमरे को 'क्रोनोफोटोग्राफे' के नाम से जाना गया । फ्रान्स के ऐसे कई प्रयोगवादी और सृजनात्मक छायाकारों द्वारा सिनेमा का स्वरूप कदम-कदम पर उभरने लगा था । लेकिन मुख्यतः फ्रान्स के 'लुईस ल्युमिएरे' को ही सिनेमा के जन्मदाता के रूप में मान्यता मिली है । 'लुईस ल्युमिएरे' एक व्यावसायिक थे और उनकी एक कंपनी थी जो 'ल्युमिएरे कम्पनी' के नाम से सुप्रसिध्द थी । लुईस व्यावसायिक होने के साथ साथ वैज्ञानिक भी थे और नए-नए आविष्कारों की खोज में निरंतर प्रयासरत रहते थे । उस दौरान फ्रान्स में फिल्म निर्माण के नए और उभरते रूप को देखकर उन्होंने इस क्षेत्र में धन लगाने का निश्चय किया । इसी कड़ी में लुईस ल्युमिएरे ने 'लि अरोजेर अरोज' नामक पहली फीचर फिल्म का निर्माण कर इसे 1895 को प्रदर्शित कर विश्व सिनेमा के क्षेत्र में नई क्रांति का सूत्रपात किया । इस फिल्म का फ्रान्स के कई शहरों में विधिवत प्रदर्शन किया गया जिसे दर्शकों ने टिकट खरीदकर देखा और सराहा था । दर्शकों की इस अद्‌भुत प्रतिक्रिया को देखकर लुईस

ल्युमिएरे और उनके साथी दोस्तों का उत्साह और अधिक बढ़ता गया और वे इस क्षेत्र में अधिक धन लगाने लगे । अति उत्साही हो चुके ल्युमिएरे और उनके दोस्तों ने मिलकर छोटी-छोटी कई फिल्मों का निर्माण किया और उसे न सिर्फ फ्रान्स में बल्कि दुनिया के अन्य देशों मे जा-जाकर प्रदर्शित करने में लग गए । इस तरह ल्युमिएरे और उनके साथी 'ल्युमिएरे ब्रदर्स' के नाम से प्रसिध्द हो गए । ''28 दिसम्बर, 1895 विश्व इतिहास का एक अत्यंत महत्वपूर्ण दिन के रूप में हमेशा याद किया जाएगा । यह दिन विशेष रूप से सिनेमा के प्रेमियों के लिए पूरे विश्व में महत्वपूर्ण है । इसी दिन पेरिस के ग्रैंड कैफे हाउस में, आमंत्रित मेहमानों के बीच, ल्युमिएरे ब्रदर्स ने पहली बार, 'सिनेमैटोग्राफ' का प्रदर्शन किया था । वह दिन उस कैफे में बैठे सभी लोगों के लिए एक अत्यंत रोमांचकारी और आश्चर्य से भरा हुआ ऐतिहासिक दिन था। थोड़ी देर के लिए तो लोगों को अपनी आँखो पर विश्वास ही नहीं हुआ कि वे आखिर क्या देख रहे है ? इस तरह चलती फिरती मूक चलचित्र से विश्व में सिनेमा का अविष्कार हुआ । ''[2]

ल्युमिएरे बंधुओं के अथक प्रयासों से सिनेमा का विस्तार विश्व के कई देशों में होने लगा । जानॅस मेलिस ने सन् 1897 ई में पेरिस के निकट विश्व का प्रथम स्टुडियो 'पैथे गारमान्टे' स्थापित कर सिनेमा के व्यवसाय को संगठित रूप दिया । अमेरिकन व्यक्ति एडविन पॉर्टर ने सिनेमा को एक नई दिशा दी । मल्टीपल शॉटस्, सनिकट, क्लोजअप, लाँग शॉटस् जैसी तकनीक से लैस ग्यारह मिनट की उनकी फिल्म 'द ग्रेट ट्रेन रॉबरी' ने दर्शकों को सन्न कर दिया । सन् 1903 ई. में निार्मित यह पहली 'फीचर फिल्म' थी । सन् 1911 में लांस एंजिल्स में प्रापर्टी के धंधे से जुडे पति-पत्नी विलकाम्से ने 120 एकड़ जमीन खरीदकर उसके प्लाट काटकर बेचे और इस जगह का नाम रखा था - 'हॉलिवुड' । आउटडोर शूटींग के लिए आस-पास अच्छी जगह होने से कई कंपनियों ने प्लॉट खरीदकर वहाँ स्टुडियो खोले। डी. डब्ल्यु. ग्रिफिथ ने हॉलिवुड में आकर पहले बायोग्राफ स्टुडियो खोला और बाद में अपनी प्रोडक्शन कंपनी बनाई । छह साल में उन्होंने लगभग चार सौ फिल्में बनाई । धीरे-धीरे सन् 1920 ई में सिनेमा उद्योग का रूप लेने लगा । आगे स्टुडियों सिस्टम आया और फिर स्टार सिस्टम । इसी दौर में लगभग सन् 1925 में चार्ली चैपलिन,

मेरी पिकफोर्ड डगलस फेयर बैंक्स उभरकर सामने आए । बीसवीं सदी के पहले दशक में पूरे युरोप में फिल्म निर्माण का आरम्भ हुआ ।

छह अक्तूबर, 1927 को न्यूयार्क में दुनिया की पहली बोलती फिल्म 'जाज सिंगर' दिखाई गई थी । इस दिशा में सन् 1926 में वार्नर ब्रदर्स को पर्याप्त सफलता मिली । इसके दो साल बाद वेस्टर्न इलेक्ट्रिक फिल्म आवाज लाने में सफल रही । आवाज आते ही फिल्म में गीत, संगीत, नृत्य, जीवन और प्रकृति की तमाम आवाजों के साथ नई धड़कन, गति और ताजगी आ गई । तीस और चालीस के दशक में फ्रेंड एस्टेअर और जिंजर्स रोजर्स ने पर्दे को चमकाए रखा । मिकिअम टापकिंग की प्रमुख भूमिका वाली फिल्म 'बेबी शार्प' पहली टेक्नीकलर फिल्म बनीं । बाइबल की कथा पर बनी 'द रोब' सिनेमास्कोप में दिखाई गई पहली फिल्म थी । पहली थ्रीडी (त्रिआयामी) फिल्म 'हाऊस ऑफ वैक्स' थी । सन् 1952 ई. में पर्दा 70 एम.एम. का हो गया । अमेरिकी फिल्मों में भव्यता पर जोर था । ब्रिटिश फिल्म युध्द पर टिकी थी । इन दिनों इटली में अंतोनिओनी, फेडरिको फैल्लिनी, स्वीडन में इंगमार बर्गमैन, जापान में अकीरा कुरोसोवा फिल्मों के विकास में अपना योगदान दे रहे थे ।

पहले दिन से ही सिनेमा दो भागो में बँट गया था । (1) कथाशैली (Feature) और (2) शिक्षा जानकारी (Short Movie / Documentary) सन् 1911-13 के बीच हर्बटे जोरिंग ने स्कॉट की दक्षिण ध्रुव यात्रा पर 'स्टॉट्स अंटार्कटिक एक्सपेडीशन' वृत्तचित्र बनाया । रॉबर्ट फ्लेहर्टी ने 'डाक्यूमेंट्री फिल्म' विधा को सर्वाधिक महत्ता दिलाई । सेसिल हेपबर्थ वृत्तचित्रों में कथ्य और प्रस्तुतीकरण संबंधी विविधताएँ लाए । सन् 1920 के आस-पास भारत, अमेरिका, रूस, जर्मनी, फ्रान्स, इंग्लैंड आदि देशों में वृत्तचित्रों का निर्माण होने लगा और समाचार-दर्शन विधा को ठोस रूप प्राप्त हुआ । सन् 1907 में पेरिस में एमिल कोल ने एनीमेशन (गतिकला) की खोज की । इससे सिनेमा में एक नया आयाम पैदा हुआ। इस विधा को नॉमेल मैक्लॉरन ने एक कलात्मक दिशा दी । अनेक फिल्मकारों ने फिल्म निर्माण तकनीक को नए-नए आयाम दिए । सन् 1923 में ज्यां ग्रीमीलों ने अपनी फिल्म

'चार्टर्स' में सिनेमा के सभी पक्षों का उचित उपयोग कर एक क्लासिक कृति का निर्माण किया ।

2.2 भारत में सिनेमा का उद्‌भव और विकास -

7 जुलाई, 1896 के दिन भारत के एक महत्वपूर्ण शहर मुंबई में शाम छह बजे काला घोडा स्थित वॉटसन होटल में आमंत्रित मेहमानों के सामने ल्युमिएरे बंधुओं के प्रतिनिधियों द्वारा पहली बार एक साथ छह मूक लघु फिल्मों का प्रदर्शन किया गया ।उस दिन वॉटसन होटल में सबसे पहले 'इंट्री ऑफ सिनेमैटोग्राफ' का प्रदर्शन किया गया और फिर 'अराइवल ऑफ ट्रेन', 'द सी बाथ', 'डिमोलिशन, 'वर्कर्स लिविंग द फैक्ट्री', 'लेडीज एंड सोल्जर्स ऑन व्हिल्स' का प्रदर्शन किया गया । भारत में सिनेमा के इस प्रथम प्रदर्शन का जनता पर जादू जैसा प्रभाव पड़ा । यह उनकी कल्पना से परे की बात थी । ''उस दिन 'अराइवल ऑफ ट्रेन' के प्रदर्शन के दौरान लोगों को अजीब रोमांचकारी अनुभव हुआ । पलभर को तो उन्हें लगा जैसे ट्रेन उस होटल के अंदर आ गई हो और वह उनके ऊपर से निकल जाएगी । कुछ लोग तो इस भय से घबराकर अपनी जगह से उठकर बाहर की ओर भागने लगे । उन लोगों के लिए भी यह रोमांचकारी अनुभव सर्वथा नया और अनोखा था।''[3] इस तरह भारत में कला के एक महान माध्यम का प्रवेश हुआ, जिसे सिनेमा कहा जाता है । भारतीय चलचित्र निर्माण के इतिहास में पहला नाम हरिश्चन्द्र सखाराम भाटवडेकर का आता है ।इन्हें सावेदादा के नाम से जाना जाता है । इन्होंने एक कुश्ती के खेल के कुछ दृश्यों का छायांकन करके लोगों के सामने प्रदर्शित किया था ।

भारत में सिनेमा के आगमन से न सिर्फ मुंबई में बल्कि कोलकाता और चेन्नई में भी तहलका मच गया था । इन शहरों में रहनेवाले अमीर छायाकार इस नवीन तकनीक की ओर आकर्षित होते चले गए । इनमें से कई छायाकार ल्युमिएरे सिनेमेटोग्राफ तकनीक के माध्यम से अपने छोटी-बड़ी घटनाओं और समारोंहो का छायांकन कर लोगों के बीच उसे प्रदर्शित करके नाम और पैसा कमाने लगे । धीरे-धीरे इन शहरों में चलचित्र निर्माण और प्रदर्शन का व्यापार बढ़ने लगा और उसके नए-नए आयाम खुलने लगे । सन् 1952 के आसपास

परिवर्तन शुरू हो गए थे लेकिन यह परिवर्तन चलचित्र के स्वरूप या विषय से संबंधित न होकर केवल चलचित्रों से जुड़े प्रदर्शनों के परिवर्तन से संबंधित थे । इसी वर्ष कोलकाता के एक टेंट के भीतर निश्चित स्थान के रूप में 'बाईस्कोप' नाम से सिनेमा दिखाने की परंपरा की शुरुआत जे.एफ.मदान ने की । सन् 1907 तक यह व्यापार काफी व्यापक पैमाने पर बढा । फिर मदान ने कोलकाता में सिनेमा थियेटरों की एक शृंखला शुरु की और इसके साथ-साथ चलचित्रों के निर्माण और इसके प्रदर्शन का बाकायदा एक सिलसिलेवार ढंग से शुरु किया । ''इस तरह भारत में प्रथम सिनेमा थियेटर के निर्माण का श्रेय जे.एफ.मदान को ही जाता है, जिन्होंने प्रथम सिनेमा थियेटर के रूप में सन् 1907 में कोलकाता शहर में ही 'एलफिंस्टन पिक्चर पॅलेस' की स्थापना की ।''[4]

मुंबई के रामचन्द्र गोपाल तोरणे ने 'पुंडलिक' फिल्म का निर्माण किया ।यह फिल्म मुंबई के 'कोरोनेशन थियेटर' में 18 मई, 2012 को प्रदर्शित की गई । लेकिन इसका छायांकन विदेशी छायाकार द्वारा किए जाने के कारण इसे भारत की पूर्ण स्वदेशी फिल्म का सम्मान नहीं मिल पाया । विवाद चाहे जो भी हो लेकिन 'पुंडलिक' का नाम भारतीय सिनेमा के इतिहास में हमेशा दर्ज रहेगा ।

3 मई, 1913 का दिन भारतीय सिनेमा के इतिहास में एक महत्वपूर्ण दिन है । इसी दिन भारतीय सिनेमा की पहली फिल्म 'राजा हरिश्चन्द्र' बनी । ''भारतीय सिनेमा की पूर्ण स्वदेशी फिल्म के रूप में धुंडीराज गोविंद फालके द्वारा निर्मित फिल्म 'राजा हरिश्चन्द्र' का नाम भारतीय सिनेमा की पहली मुककथा चलचित्र के रूप में अंकित हो गया ।''[5] धुंडीराज गोविंद फालके उर्फ दादासाहेब फालके को भारतीय कथाफिल्मों के जन्मदाता के रूप में जाना जाता है । 'राजा हरिश्चन्द्र' फिल्म बनाने के पीछे दादासाहेब फालके की कड़ी मेहनत थी । अत्यंत प्रतिकुल परिस्थितयों में उन्होंने इस फिल्म का निर्माण किया था । दादासाहेब ने जब पहली बार सन् 1911 में 'द लाइफ ऑफ क्राइस्ट' इस फिल्म को देखा तो वे कई दिनों तक इस फिल्म को भूल नहीं पाए । उसी दिन उन्होंने भगवान श्रीकृष्ण के जीवन पर फिल्म बनाने का विचार किया लेकिन उस समय तक उन्हें फिल्म निर्माण के बारे में कुछ पता नहीं

था । वे फिल्म निर्माण का ज्ञान पाने हेतु इंग्लैड चले गए । वहाँ उन्होंने फिल्म निर्माण से संबंधित विधिवत शिक्षा ग्रहण की । इसके बाद वे कैमरा और फिल्मोपयोगी सामान खरीदकर भारत आये । इसके बाद उन्होंने कथाफिल्म बनाने की तैयारी शुरू की ।अब तक उन्होंने श्रीकृष्ण के जीवन कथा पर फिल्म बनाने का इरादा छोड़ दिया था । उन्होंने अपनी पहली फिल्म के लिए एक कहानी और चरित्र को चुना । वह एक धार्मिक कथा थी और चरित्र का नाम था 'राजा हरिश्चन्द्र' इस पर दादासाहब फालके ने अपने जीवन की प्रथम फिल्म बनाई। ''राजा हरिश्चन्द्र' भारतीय सिनेमा की यात्रा का वह पहला कदम था । इस पहले कदम से जो यात्रा शुरू हुई वो देश-काल के बदलते स्वरूपों और उतार-चढ़ाव के कई डगमगाते रास्तों पर चलता हुआ, लक्ष्य की सीधी राह पर आज भी अपनी यात्रा में गतिशील है।''[6]

दादासाहब फालके ने 'राजा हरिश्चन्द्र' के माध्यम से दृश्यों का ऐसा ताना-बाना बुना कि हर कोई सिनेमा का दिवाना हो गया । यह वह समय था जब भारत में 'श्वेत-श्याम' फिल्में बनाई जाती थी । उस दौर में मूक सिनेमा के चलन की शुरूआत पहली बार 'राजा हरिश्चन्द्र' ने की । ''राजा हरिश्चन्द्र' एक पौराणिक फिल्म थी, जिसने धार्मिक फिल्मों को एक नया प्लेटफार्म दिया । तब से तीसरे दशक तक धार्मिक और ऐतिहासिक फिल्मों का दौर देखने को मिलता है । इस अवधि की फिल्मों में पारसी थियेटर का प्रभाव भी हमें दिखता है । दादासाहब के अलावा मदान, जितिन बोस, धीरेन्द्र गांगुली जैसे फिल्मकारों ने अपने निर्माण से सिनेमा को नई पहचान दी ।''[7] सन् 1913 से 1923 तक के समय में ज्यादातर धार्मिक फिल्मों का ही निर्माण हुआ ।यह सिनेमा की बाल्यावस्था का समय था । वह समाज को इतना प्रभावित नहीं कर पाया । लोग सिनेमा में काम करने से कतराते थे । लेकिन 'राजा हरिश्चन्द्र' से शुरु हुआ यह सफर 'भस्मासुर मोहिनी', 'सत्यवान सावित्री', 'लंका दहन', 'कृष्ण जन्म', 'कालिया मर्दन' तक जा पहुँचा । जहाँ पौराणिक फिल्मों में लोगों ने पहली बार मनोरंजन ढूँढा ।

'राजा हरिश्चन्द्र' फिल्म बनाने के चार साल बाद दादासाहब फालके ने दो फिल्में बनाई जो 'कृष्ण जन्म' और 'लंका दहन' के नाम से जानी जाती है । यह चार साल का

अंतराल शायद प्रथम विश्वयुध्द (1914-1918) के कारण हो सकता है, क्योंकि प्रथम विश्वयुद्ध का असर फालके की महत्वाकांक्षी फिल्म निर्माण योजनाओं पर पड़ा ।वित्तीय संकट के कारण उन्हें अपनी नीजि फिल्म निर्माण कंपनी बंद करनी पडी । उसके बाद सन् 1917 के मध्य में उन्होंने साझेदारी में 'हिंदुस्तान फिल्म कंपनी' की स्थापना की । इस कंपनी के बैनर के नीचे उन्होंने करीबन सौ फिल्मों का निर्माण किया । इनमें 'कृष्ण जन्म', 'कालिया मर्दन', 'संत तुकाराम', 'संत नामदेव', 'संत एकनाथ', 'भक्त प्रल्हाद', मुख्य रूप से चर्चित हुई थी । सन् 1932 में उन्होंने इस कंपनी के लिए 'सेतु बंधन' नाम की एक फिल्म बनाई थी जो इस कंपनी की आखिरी फिल्म थी । अंततः 1933 ई. में यह कंपनी बंद हो गई । इसके बंद होने से फालके बहुत दुखी हुए । उन्हें इस कंपनी से गहरा लगाव हो गया था । सन् 1931 में भारत में सवाक् या बोलती फिल्मों का आरम्भ फिल्म 'आलम आरा' से हुआ । भारतीय सिनेमा का रूप रंग तेजी से बदलने लगा था । दर्शकों की अपेक्षाएँ दिन-ब-दिन बढ़ने लगी थी और लोग बेसब्री से सवाक् फिल्मों का इंतजार करने लगे थे । सन् 1937 में फालके ने अपने जीवन की अंतिम फिल्म 'गंगावतरण ' का निर्माण किया । सन् 1944 में फालके की मृत्यु हुई। ''दादासाहब फालके इतिहास बनके रह गए ।आज सिनेमा के इस इतिहास पुरुष के सम्मान में भारत सरकार द्वारा हर वर्ष सिनेमा के विशेष योगदान के लिए 'दादासाहब फालके पुरस्कार' के नाम से सर्वोच्च सम्मान दिया जाता है ।''[8]

सन् 1918 से सन् 1920 के मध्य में भारतीय सिनेमा के व्यापार ने गति पकड़ ली थी । तब यह व्यापर एक संगठित व्यापार क्षेत्र के रूप में परिवर्तित होने लगा। लोग मिलकर अपनी-अपनी योजनाओं के साथ फिल्म निर्माण में जुट गए और तब कंपनियों के साथ स्टुडियो का जन्म होने लगा फिल्म निर्माण की गति बढ़ने लगी । ''भारतीय राष्ट्रीय फिल्म अभिलेखागार के एक आँकडे के अनुसार सन् 1918 से लेकर सवाक फिल्मों के निर्माण शुरु होने तक कुल छोटी-बड़ी फिल्मों को मिलाकर 1268 मूक फिल्मों का निर्माण भारत में हुआ था ।''[9] उस काल की कुछ ऐसी बड़ी-बड़ी कंपनियाँ और उनके स्टुडियो थे जिनके कार्यकाल में भारतीय सिनेमा को काफी लाभ हुआ । भारतीय सिनेमा के विकास में इन

कंपनियों और स्टुडियो का योगदान उल्लेखनीय हैं । सन् 1918 में मूक फिल्मों के निर्माण के लिए संपत और माणिकलाल पटेल ने एक साथ मिलकर 'कोहिनूर फिल्म कंपनी' की स्थापना की । इसका मुख्य उद्देश्य था भारत में फिल्मों के निर्माण के लिए निर्माताओं को एक छत के नीचे लगभग सभी सुविधाएँ मुहैय्या कराना । यह कंपनी अपने स्टुडियों में फिल्म निर्माण के लिए आधुनिक तकनीकी सुविधाएँ उपलब्ध कराने के साथ-साथ फिल्म के कलाकारों को भी अपना भविष्य बनाने सँवारने के लिए बुनियादी सुविधाएँ उपलब्ध कराती थी । उन दिनों के सुप्रसिध्द फिल्म निर्माता भवनानी, चंदुलाल शाह, होनी मास्टर, नंदलाल, जसवंतलाल, आर.एस.चौधरी आदि ने अपने समय की कई सफल मूक कथा फिल्मों का निर्माण कोहिनूर कंपनी के स्टुडियो में किया था । कोहिनूर कुछ कारणों की वजह से सन् 1932 में बंद हो गई । माणिकलाल पटेल ने सन् 1924 में 'कृष्णा फिल्म कंपनी' की स्थापना की । पेल स्वयं एक साहित्यकार, फिल्मी लेखक और फिल्म निर्माता भी थे । उस समय के सुप्रसिध्द फिल्म निर्माताओं ने जिनमें हर्षदराय मेहता, मोहनलाल शाह, प्रफुल्ल घोष, कांजीभाई राठोर, ए.पी.कपुर ने 'कृष्णा फिल्म कंपनी' के लिए फिल्मों का निर्माण किया । कुल 44 फिल्मों का निर्माण कर चुकने के बाद यह कंपनी सन् 1935 में बंद हो गई ।

आर्देशिर इरानी ने सन् 1926 ई. में अब्दुल्ला युसूफ अली और मोहम्मद अली रंगूनवाला के साथ मिलकर 'इम्पीरियल मूवीटोन' की स्थापना की । उस समय धार्मिक कथाओं पर बहुत सारी फिल्में बन रही थी, लेकिन 'इम्पीरियल मुवीटोन' ने अपना ध्यान ऐतिहासिक फिल्मों की ओर अधिक लगाया । सन् 1928 में इसी बैनर तले चौधरी के निर्देशन में 'अनारकली' फिल्म का निर्माण हुआ । यह फिल्म ऐतिहासिक प्रेमकथा पर आधारित थी ।सलीम और अनारकली की लोकप्रिय कथा को इसमें भुनाया गया था । 'इम्पिरियल मूवीटोन' ने सन् 1931 में पहली सवाक फिल्म 'आलम-आरा' बनाई ।भारतीय सिनेमा के इतिहास में 'आलम-आरा' पहली बोलती फिल्म के नाम से अमर हो गई । आर्देशिर इरानी ने यह फिल्म बनाई थी । '' 'आलम-आरा' 14 मार्च, 1931 को मुंबई के मैजेस्टिक थियेटर में रिलीज हुई थी ।आलम-आरा से अर्देशिर इरानी भारत की पहली सवाक

फिल्म के निर्माता बन गए और मास्टर विट्ठल और जुबेदा बने भारत की पहली सवाक फिल्म के नायक और नायिका । 'आलम-आरा' ने भारत की प्रथम सवाक फिल्म के साथ-साथ गीत नृत्य और संगीत के लिए भी भारत की पहली फिल्म होने का गौरव प्राप्त किया है ।''[10] 'इम्पिरियल मूवीटोन' के मुख्य निर्देशकों में आर.एस.चौधरी, बी.पी मिश्रा और मोहन भवनानी का नाम आता है । हिंदी भाषा के आलावा भारत की अन्य क्षेत्रीय भाषाओं में भी 'इम्पीरियल' ने बहुत सारी फिल्मों का निर्माण किया । गिडवानी द्वारा निर्मित फिल्म 'किसान कन्या' सन् 1937 में बनी थी और भारत की यह पहली स्वदेशी रंगीन फिल्म थी 'इम्पिरियल मूवीटोन' का भारतीय सिनेमा के विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है । सन् 1938 में इम्पिरियल बंद हो गई ।

व्ही. शांताराम, दामले, बाबुराव पेंढारकर और फत्तेलाल ने मिलकर 'प्रभात फिल्म कंपनी' की सन् 1929 में शुरूआत की । सन् 1933 में इसे कोल्हापूर से पुणे ट्रांसफर किया गया । उन दिनों की यह बहुत बड़ी और प्रतिष्ठित फिल्म कंपनी थी । यह कंपनी फिल्म निर्माण से संबंधित कई सारी तकनीकी सुविधाओं से लैस थी । उन दिनों की प्रचलित प्रथा के अनुसार 'प्रभात फिल्म कंपनी' ने अपने यहाँ कई सुप्रसिध्द और बहुचर्चित फिल्म निर्माताओं, कलाकारों और तकनीशियनों को मासिक तनख्वाह पर रखा था । आज यह बात अजीब लग सकती है, लेकिन उस समय फिल्म से संबंधित लोगों को हर महिने बाकायदा वेतन मिलता था । आज की तरह 'स्टारडम' का प्रचलन नहीं था । निर्माता-निर्देशक कलाकार, फिल्म कंपनी में नौकरी करते थे । खैर, धीरे-धीरे प्रभात ने फिल्म निर्माण के साथ-साथ फिल्म वितरण और थियेटरों के निर्माण में भी कदम रखा और एक अलग पहचान बना ली । इस कंपनी में सामाजिक विषयों पर फिल्मों का निर्माण व्ही. शांताराम ने किया । ''भारतीय सिनेमा में सामाजिक कथावस्तु पर आधारित फिल्मों के निर्माण को नया आयाम देने के लिए व्ही.शांताराम का नाम सदा अमर रहेगा । मूक फिल्मों से अभिनय से अपना सफर शुरू करके फिल्मों के निर्माण तक के सफर में जो आमिट छाप व्ही. शांताराम ने भारतीय सिनेमा के इतिहास में दर्ज की है वह अभूतपूर्व है । इन्होंने अपनी हर फिल्मों के माध्यम से समाज के रूढ़िवादी विचारों को कुरेदा है और इसे एक नई दिशा दी है ।''[11] इस कंपनी के

अन्य निर्माता के रूप में गजानन जागरिदार, राजा नेते, विश्राम बेडेकर, केशवराव नारायण काले कार्यरत थे । इस कंपनी ने अपने फिल्मों के उत्तम स्तर और हृदय को छू लेनेवाली कथावस्तु के कारण देश-विदेश और फिल्म समारोहों में काफी प्रतिष्ठा पाई । इसी कंपनी की सन् 1937 में दामले और फत्तेलाल द्वारा निर्मित 'संत तुकाराम' भारत की पहली फिल्म थी जिसे उस वर्ष के 'वेनिस फिल्म समारोह' में पुरस्कृत किया गया । इसी कंपनी की कुछ अन्य चर्चित और सफल फिल्में थी 'अयोध्या का राजा', 'जलती निशानी', 'माया मछिन्दर', 'सिंहगढ', 'सैरन्धी', 'चंद्रसेना', 'धर्मात्मा', और 'संत ज्ञानेश्वर' आदि । व्ही.शांताराम ने आपसी मतभेदों के कारण सन् 1942 में 'प्रभात फिल्म कंपनी' को अलविदा कहा और वे मुंबई आ गए । मुंबई में उन्होंने 'राजकमल कला मंदिर' की स्थापना की । इस बैनर के तले व्ही.शांताराम ने कई ज्वलंत सामाजिक समस्याओं पर आधारित फिल्मों का निर्माण किया। इसमें देश-विदेश में चर्चित फिल्म 'डॉ.कोटनिस की अमर कहानी' फिल्म भी शामिल थी । 'दो आँखे बारह हाथ', 'नवरंग', 'झनक झनक पायल बाजें', 'गीत गाया पत्थरों ने', 'पिंजरा' आदि फिल्में भी 'राजकमल कला मंदिर' के बैनर तले बनीं जिन्हें हर समय पसंद किया जाता हैं । व्ही. शांताराम ने 'प्रभात फिल्म कंपनी' छोडने के बाद कंपनी की फिल्म निर्माण की गति धीमी पड गई । फिर कुछ अन्य कारणों से धीरे-धीरे यह कंपनी सन् 1953 में बंद हो गई ।

'रणजीत मूवीटोन' इस फिल्म निर्माण कंपनी की स्थापना मुंबई में सन् 1929 में चंदुलाल शाह ने की । उन दिनों की कई फिल्म निर्माण कंपनियों में 'रणजीत मूवीटोन' एक मशहूर नाम था ।इस कंपनी का कुल कार्यकाल सारी कंपनियों से अधिक रहा है ।यह कंपनी सन् 1929 से लेकर सन् 1960 तक अपने क्षेत्र में कार्यरत रही । यह कंपनी सामाजिक, व्यंग्यात्मक और स्टंट फिल्मों के निर्माण के कारण काफी प्रसिध्द हो गई थी । इस कंपनी के लिए भारतीय सिनेमा के शुरूआती समय के कई निर्देशकों ने फिल्मों का निर्माण किया जिसमें जयंत देसाई, नंदलाल जसवंत लाल, ए.आर.कारदार, और किदार शर्मा का नाम शामिल है । कलाकारों में निरूपमा रॉय, पृथ्वीराज कपूर, मोतीलाल, के.एल.सहगल जैसी हस्तियों ने इस कंपनी की फिल्मों में काम किया । सी.देसाई और ए.पटेल द्वारा मुंबई में सन्

1930 में 'सागर फिल्म कंपनी' की स्थापना की गई । इस कंपनी से जुडी मशहुर हस्तियाँ थी - महबूब खान, जिया सरहदी और रामचन्द्र ठाकुर । इस कंपनी ने अपने कार्यकाल में लगभग हर तरह की प्रचलित फिल्में बनाई । भारतीय सिनेमा के एक महत्वपूर्ण फिल्मकार महबूब खान ने इस कंपनी के लिए 'अल हिलाल', 'डेक्कन क्वीन', 'जागीरदार' और 'औरत' फिल्में बनाई । ''महबूब खान की क्लासिक फिल्म 'औरत' सागर फिल्म कंपनी की अंतिम फिल्म थी जो सन् 1939 में बनी थी लेकिन इसे रिलिज 'नेशनल पिक्चर्स' ने सन् 1940 में किया था । महबुब खान की 'औरत' वही फिल्म थी जो उन्होंने दोबारा सत्रह वर्ष बाद अर्थात सन् 1957 ई. में अपने बैनर में 'मदर इंडिया' के नाम से बनाई थी । जिसमें नरगिस ने टाइटल रोल किया था ।''[12] बी.एन.सरकार ने सन् 1931 में कोलकाता में 'न्यु थियेटर' की स्थापना की । आरम्भ में इसे एक साउंड स्टुडिओ के रूप में शुरू किया गया था । न्यु थियेटर स्टुडियो में आधुनिक यंत्र लगाए गय थे । जिसके कारण उस दौर के प्रसिध्द फिल्म निर्माता निर्देशक 'न्यु थियेटर' में आने लगे । इस स्टुडियो में हिंदी और बांग्ला भाषा में एक साथ कई सफल और लोकप्रिय फिल्मों का निर्माण किया गया । सामाजिक फिल्मों का निर्माण करके 'न्यू थियेटर' ने भारतीय सिनेमा में अपनी एक विशिष्ट जगह बना ली । सन 1935 में पी.सी.बरुआ के निर्देशन में बनी 'देवदास' उस समय की सुपरहिट फिल्म थी। सन् 1955 में 'न्यू थियेटर' स्टुडियो बंद हो गया ।

सन् 1934 में हिमांशु रॉय द्वारा स्थापित 'बॉम्बे टॉकीज' फिल्म निर्माण के क्षेत्र में भारत की प्रथम पब्लिक लिमिटेड कंपनी रही है । इस कंपनी की सबसे मशहूर नायिका थी देविका रानी । '' 'बॉम्बे टॉकीज' में सिर्फ सामाजिक विषयों पर आधारित कथाओं पर ही फिल्मों का निर्माण हुआ । प्रेमकथा हो या पारिवारिक कथा हिमांशु रॉय ने हमेशा समाज के रूढ़िवादी संस्कारों और नियमों को आधार बनाते हुए ही फिल्मों का निर्माण किया ।''[13] हिमांशु रॉय ने हिंदी सिनेमा को दो सर्वश्रेष्ठ अभिनेता दिए एक अशोक कुमार और दूसरे दिलीप कुमार । इस बैनर के तहत बनीं फिल्में थी- 'जवानी की हवा', 'जीवन नैया', 'अछूत कन्या', 'दुर्गा', 'कंगन', 'आजाद', 'बंधन' आदि । सन् 1940 में हिमांशु रॉय की असामायिक मौत हो गयी । उसके बाद देवीका रानी ने 'बॉम्बे टॉकीज' को सम्भाला ।

लेकिन कुछ सालों में ही यह कंपनी बंद होने के कगार पर पहुँच गई । निर्देशक सुबोध मुखर्जी ने सन् 1943 में 'फिल्मिस्तान स्टुडियो' की स्थापना की । फिल्मिस्तान स्टुडियो से देवानंद, कमाल अमरोही, बिमल रॉय, नितिन बोस और फणी मुजुमदार जैसे दिग्गजों ने अपना फिल्मी सफर शुरू किया । सन 1954 तक 'फिल्मिस्तान' भी बंद हो गया । होमी वाडिया ने सन् 1933 में 'वाडिया मूवीटोन' इस फिल्म निर्माण कंपनी की स्थापना की । स्टंट फिल्में बनाने में 'वाडिया मूवीटोन' को माहरत हासिल थी । स्टंट फिल्मों की नायिका नादिया हुआ करती थी जिन्हें 'फियरलेस नाडिया' के नाम से जाना जाता था । इस बैनर तले बनी 'हंटरवाली' फिल्म सुपरहिट रही । दर्शकों ने इसे बहुत पसंद किया । सन् 1942 के अंत तक 'वाडिया मूवीटोन' बंद हो गई । ''फिल्म निर्माण कंपनियों की शुरुआत वैसे सन् 1918 के आसपास हो चुकी थी और सन् 1940 तक पूरे जोरों पर रही, लेकिन द्वितीय विश्वयुध्द के कारण पूरी भारतीय बाजार व्यवस्था चरमरा गई थी और इसका व्यापक असर फिल्म बाजार पर भी पड़ा । इस कारण कई फिल्म निर्माण कंपनियों की वित्तिय हालत तनी गडबडा गई की उसे अपना कारोबार या तो बंद ही कर देना पडा या किसी के हाथों बेच देना पडा । वैसे एक आँकड़े के अनुसार सन् 1935 में पूरे भारत में छोटी-बड़ी मिलाकर कुछ 85 फिल्म निर्माण कंपनियाँ फिल्मों का निर्माण कर रही थी ।''[14] इन फिल्म कंपनियों का भारतीय सिनेमा के विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहा ।

2.3 हिंदी सिनेमा का विकासक्रम -

भारतीय सिनेमा के विकास के साथ-साथ हिंदी सिनेमा का विकास दिखाई देता है । जब सिनेमा में 'ध्वनि' का और भाषा का प्रवेश हुआ तब हिंदी के साथ-साथ कई क्षेत्रीय भाषाओं में सिनेमा निर्माण का कार्य तीव्र गती से होने लगा । लेकिन उस समय भी हमारे देश की संपर्क भाषा हिंदी ही थी । ज्यादातर लोग हिंदी बोलते और समझते थे । इसलिए अधिकतर निर्माता-निर्देशकों ने अपनी बात राष्ट्रीय स्तर पर रखने के लिए हिंदी भाषा में फिल्में बनाई । हिंदी फिल्में बनाने का प्रमुख केंन्द्र 'मुंबई' था ।हिंदी सिनेमा को हॉलिवुड की तर्ज पर 'बॉलिवुड' कहा जाने लगा । 'बॉलिवुड' यह संबोधन इतना लोकप्रिय हुआ कि

'बॉलिवुड' भारतीय फिल्मों का पर्याय बन गया । लेकिन सिर्फ 'बॉलिवुड' सिनेमा भारतीय सिनेमा नहीं है । हिंदी फिल्मों के साथ-साथ भारत की अलग-अलग भाषाओं में बननेवाली फिल्में भारतीय सिनेमा के अंतर्गत आती हैं ।

हिंदी सिनेमा आज लोगों के दिलों-दिमाग पर पूरी तरह से छा गया है । यह कुछ दिनों में नहीं हुआ है । इसे यहाँ तक आने के लिए सौ सालों का लंबा सफर तय करना पड़ा है । हिंदी सिनेमा के विकासक्रम को हम कुछ निम्न मुद्दों के सहारे स्पष्ट करने की कोशिश करेंगे । स्वतंत्रतापूर्व हिंदी सिनेमा से लेकर इक्कीसवी सदी के दूसरे दशक के शुरुआती वर्षों तक के हिंदी सिनेमा को इसमें शामिल किया गया है । हिंदी सिनेमा का विकासक्रम निम्नवत् प्रस्तुत है -

2.3.1 स्वतंत्रतापूर्व हिंदी सिनेमा -

सन् 1931 में 'आलम-आरा' फिल्म के प्रदर्शन से बोलती फिल्मों का युग शुरू होता है । तब से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ती (सन् 1947) तक की हिंदी सिनेमा की विकास यात्रा को यहाँ हम देखेंगे -

सन् 1931 में पहली बोलती फिल्म 'आलम-आरा' बनी, जिसके निर्माता निर्देशक थे अर्देशीर इरानी । यह फिल्म मुंबई के मैजेस्टिक सिनेमा हॉल में प्रदर्शित हुई। इस फिल्म में बारह गाने थे । इस फिल्म के कलाकार थे मास्टर विट्ठल, जुबैदा, जगदीश सेठी, पृथ्वीराज कपूर और गायक थे वजीर मोहम्मद खान । ''आलम आरा फिल्म का गाना 'दे दे खुदा के नाम पर....' देश का पहला गाना बना तथा इसको गाने वाले वजीर मोहम्मद खान पहले गायक बने । इसी भाँति इस फिल्म का गीत 'बदला दिलवाएगा या रब तू सितमगारों से.....' गानेवाली जुबैदा पहली गायिका और नायिका कहलाई । इस फिल्म के संगीतकार थे, फिरोज शाह मिस्त्री तथा बी.ईरानी । फिल्म लेखक थे जोसफ डेविड ।''[15] 'आलम-आरा' से प्रेरणा लेकर दादासाहब फालके ने अपनी मूक फिल्म 'सेतु बंधन' को बोलती बनाया । यह भारत की पहली डब फिल्म कहलाई । दादासाहब ने अपने फिल्मी कैरीयर में सौ से ज्यादा फिल्में

बनाई जिनमें 'सेतु बंधन' एकमात्र बोलती फिल्म थी । फिल्मों की पहली बाल कलाकार फालके की बेटी मंदाकिनी थी ।

चौथे दशक में बाबूराव पेंटर, पी.सी. बरूआ, दामले, भालजी पेंढारकर, सोहराब मोदी, फत्तेलाल, व्ही.शांताराम जैसे निर्माता निर्देशकों ने 'दुनिया न मानें, 'आदमी', 'अछूत कन्या', 'पुकार', 'सावकारी पाश', 'देवदास', 'सैरंध्री' जैसी उल्लेखनीय फिल्में बनाई । बॉम्बे टॉकीज की 'अछूत कन्या' से अशोक कुमार और देवीका रानी का पदार्पण हुआ । शरदचंद्र चटर्जी के उपन्यास 'देवदास' पर इसी नाम से बनी फिल्म से कुंदनलाल सहगल का आगमन हुआ । बरूआ द्वारा निर्मित हिंदी फिल्म 'देवदास' मील का पत्थर सिध्द हुई। सोहराब मोदी द्वारा निर्मित 'पुकार' पहली ऐतिहासिक फिल्म थी । इस फिल्म से नसीम बानों का प्रवेश हुआ । सन् 1931 में बाईस हिन्दी फिल्में बनीं । सन् 1932 में बनी फिल्मों में गानों की भरमार थी । ''फिल्म राधारानी में 17, 'मीराँबाई' में 19, 'सुभद्राहरण' में 22, 'मुफलिस आशिक' में 32, 'शादी की रात ' में 35 और 'चतरा बकावली' में 49 गाने थे संगीतकर नागरदास के संगीत निर्देशन वाली फिल्म 'इंद्रसभा' में 71 गाने थे ।''[16]

चालीसवें दशक में फिल्म 'हिम्मत-ए-मर्द' से लालिता पवार, 'बिलासी ईश्वर' से शोभना समर्थ, 'माया मच्छिन्द्र' से दुर्गा खोटे, 'सिंकदर' से बनमाला, 'रूपलेखा' से जमुना देवी, 'दुनिया न माने' से शांता आपटे, 'छमिया' से प्रतिमा दासगुप्ता, 'औरत का दिल' से सितारा देवी तथा 'चांद' से बेगमपारा का आगमन हुआ । अन्य उल्लेखनीय अभिनेत्रियाँ थी शकीला, नाडिया, गौहर, लीलाचन्द्र, सविता देवी, जहांआरा, कज्जन, फातीमा, लीलादेवी, उमा शशि, रतन बाई, कंचनमाला, नुरजहां, लीला मिश्रा, स्नेहप्रभा अंजुरी आदि । अभिनेताओं में उल्लेखनीय थे - सान्याल, किशोर साहू, जे.पी,बरुआ, सादिक अली, एस.नजीर, बोमन श्राफ, मास्टर विनायक, याकूब, चन्द्रमोहन, ईश्वरलाल, दिलीप कुमार, नासिर खान, बलराज साहानी, करन दीवान आदि। उल्लेखनीय फिल्में थी - आलमआरा, मेरी जान, उदयकाल, यहूदी की लडकी, चंद्रसेना, एक दिन का बादशाह, अपराधी, पृथ्वीराज-संयोगिता, जीवन नैया, भिखारी, खून का खून, अल हिलाल, औरत का दिल,

नदी किनारे, चांद कलयुग, जय स्वदेश, नई दुनिया, अनारकली, पुकार, सपेरा, हंटरवाली आदि । ''उस दौर की कुछ महत्वपूर्ण फिल्मों में तत्कालीन भारतीय समाज में व्याप्त हिंदू - मुस्लिम वैमनस्य, अछूतोध्दार, नारी स्वतंत्रता व शिक्षा, बेमेल विवाह, कृषक व मजदूर दुर्दशा व संघर्ष, विधवा पुनर्विवाह जैसी समस्याओं को भी दर्शाया गया ।''[17]

प्रभात टाकीज की 'अमृत मंथन' (1934) यह पहली हिंदी फिल्म थी जिसने सिल्वर ज्युबली मनाई । इसके निर्देशक बाबूराव पेंढारकर थे । इस फिल्म के माध्यम से बलि-प्रथा का विरोध किया गया था । इसी वर्ष आयी 'चंडीदास' इस फिल्म का निर्देशन नितिन बोस ने किया था । यह फिल्म नीची जाति की धोबिन रामी व चंडीदास की प्रेमकथा पर आधारित था। इस फिल्म के माध्यम से जातिगत भेदभाव की समस्या को उठाया गया था । इसी साल प्रदर्शित हुई फिल्म 'डाकू मंसूर' का कथानक धनी और निर्धन का संघर्ष था, जिसमें डाकूओं द्वारा अमीरों को लूटना तथा गरीबों की सहायता को दर्शाया गया था । सन् 1935 में देवकी बोस द्वारा निर्देशित फिल्म में बिहार में भूचाल के बाद हुई बरबादी को चित्रित करते हुए समाजसेवी व धनलोलूप व्यक्तियों के अन्तसंघर्ष को चित्रित किया गया था । सन् 1936 में बॉम्बें टॉकीज द्वारा निर्मित तथा फ्रैंज ऑस्टिन द्वारा निर्देशित इस फिल्म की कथा अछूत समस्या पर आधारित थी । इसमें एक ब्राह्मण युवक व अछूत युवती की प्रेमकथा का निरूपण किया गया था । इसी वर्ष आयी व्ही. शांताराम द्वारा निर्देशित 'अमर ज्योति' यह फिल्म नारी विद्रोह और नारी मुक्ति की कथा पर आधारित थी । नितिन बोस द्वारा निर्देशित 'प्रेसीडेन्ट' (1937) यह फिल्म मार्क्सवादी विचारों से प्रभावित थी, जिसमें घोषणा की गई थी कि मजदूरों को समान अधिकार कारखाने के प्रबन्धन व संचालन में निर्णायक भूमिका तथा लाभ में हिस्सेदारी मिलनी चाहिए । इसी वर्ष प्रदर्शित 'दुनिया न माने' व्ही.शांताराम द्वारा निर्देशित बेमेल विवाह से उत्पन्न समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित करनेवाली फिल्म थी ।इसी वर्ष की एक अन्य फिल्म 'अनाथ आश्रम' हेमचन्द्र द्वारा निर्देशित विधवा पुनर्विवाह की वकालत करनेवाली आरम्भिक फिल्म थी । सन् 1938 नितिन बोस द्वारा निर्देशित 'दुश्मन' यह फिल्म क्षय-रोग उन्मूलन तथा जागरूकता पर आधारित थी । इसी वर्ष की नितिन बोस की ही अन्य एक फिल्म 'धरती माता' में सामूहिक कृषि का संदेश देते हुए कृषि के आधुनिकीकरण के

साथ-साथ क्रान्तिकारी बदलाव की बात कही गई थी । महबूब खान द्वारा निर्देशित 'औरत' (1940) यह भारतीय कृषक जीवन की समस्याओं व स्त्री जीवन की त्रासदी को एक साथ व्यक्त करनेवाली फिल्म थी । इसी वर्ष आयी चन्दुलाल शाह द्वारा निर्देशित 'अछूत' यह फिल्म हरिजन उध्दार की समस्या को उठाने वाली अपने समय की क्रान्तिकारी फिल्म थी । व्ही.शांताराम द्वारा निर्देशित 'पडोसी' (1941) यह फिल्म हिन्दु-मुस्लिम सद्भाव व भाईचारे पर आधारित थी । इस फिल्म की विशेष बात यह थी, कि निर्देशक ने हिन्दु पात्रों की भूमिका मुस्लिम कलाकारों व मुस्लिम पात्रों की भूमिका हिन्दु अभिनेताओं से करवाकर अपने संदेश को अधिक सशक्तता प्रदान की थी । 'नया संसार' (1941) एन.आर.आचार्य द्वारा निर्देशित इस फिल्म में एक आदर्शवादी पत्रकार व उसकी प्रेमिका के सामाजिक संघर्ष को चित्रित किया गया था । सन 1946 में आयी 'धरती के लाल' ख्वाजा अहमद अब्बास द्वारा निर्देशित यह फिल्म अकाल और युध्द की विभिषिका के मध्य कृषकों की दुर्दशा और उनके पलायन के दर्द को व्यक्त करती है । इसी वर्ष प्रदर्शित चेतन आनंद द्वारा निर्देशित 'नीचा नगर' इस फिल्म में धनाढय वर्ग और निर्धन वर्ग की जीवन शैली और नैतिकता के विरोधाभास को चित्रित किया गया था ।

इन फिल्मों के माध्यम से तत्कालीन समाज में व्याप्त समस्याओं को फिल्म का विषय बनाकर जनमानस को जागरूक करने का प्रयास साफ देखा जा सकता है । ''हालांकि गुलाम देश का सिनेमा होने के कारण हिंदी सिनेमा भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में रूसी सिनेमा के समान निर्णायक भूमिका तो नहीं निभा सका, लेकिन समाज को एक सूत्र में बाँधने एवं सामाजिक बुराइयों के प्रति जागरूकता फैलाने में निश्चित ही उसकी निर्णायक भूमिका रही, जिससे इन्कार नहीं किया जा सकता । हिंदी सिनेमा ने प्रत्यक्ष रूप से भले ही स्वतंत्रता आन्दोलन को गति न दी हो परन्तु परोक्ष रूप से उसने अवश्य ही जन-मानस को एकजुट होने का निरन्तर संदेश दिया ।''[18] उपर उल्लेखित फिल्मों के अतिरिक्त भी कुछ अन्य फिल्में अपनी भाव प्रवणता, संवेदनशीलता तथा गीत-संगीत के लिए अत्यंत लोकप्रिय हुई जिनमें प्रमुख थी - देवदास, कर्मा, पुरन भगत, हंटरवाली, स्ट्रीट सिंगर, पुकार, बंधन, चित्रलेखा,

राज नर्तकी, रोटी, तानसेन, किस्मत, पृथ्वी वल्लभ, शकुंतला, रतन, मीरा, डॉ.कोटनीस की अमर कहानी, अनमोल घडी आदि ।

इस प्रकार स्वतंत्रता पूर्व हिंदी सिनेमा का काल सामाजिक चेतना, उपलब्धियों एवं सामाजिक सरोकारों के प्रति आस्था के साथ-साथ हिंदी सिनेमा की विशिष्ट पहचान बन चुकी गात-संगीत की समृध्द परम्परा के सूत्रपात का युग था ।

2.3.2 स्वातंत्र्योत्तर हिंदी सिनेमा -

15 अगस्त, 1947 को भारत देश स्वतंत्र हुआ । स्वतंत्रता के बाद का समय हमारे देश के इतिहास का महत्वपूर्ण समय था । नये स्वतंत्र देश में जहाँ एक ओर आम लोग भविष्य के सपनों को लेकर आशा से भरे हुए थे, वहीं दूसरी तरफ सामाजिक वैमनस्य, साम्प्रदायिक कटुता व राजनैतिक भ्रष्टता ने उन सपनों को धूल-धूसरित कर दिया । ''विभाजन की मार्मिक घटना ने यूँ भी स्वतंत्रता की उमंग को मध्दम कर दिया था । ब्रिटिश औपनिवेशिक भारत में वैसे भी कई स्तरों पर भ्रष्टाचार, कटुता उत्पन्न हो चुकी थी, जिसमें आजादी के पश्चात निरन्तर वृध्दि ही हुई ।''[19] स्वतंत्रता के बाद सरकारी एवं व्यापारी वर्ग ने अपने निहित स्वार्थों के कारण भ्रष्टाचार को पर्याप्त बढावा दिया, जिससे आम आदमी का जीवन अधिक कष्टमय हो गया और स्वतंत्र राष्ट्र की उसकी कल्पना को धक्का लगा । सरकारी, व्यापारी व उच्च वर्गों द्वारा भ्रष्टाचार एवं काला बाजारी ने नेहरू युग में दिखाए गए सपनों की पोल खोल दी । स्वातंत्र्योत्तर काल सपनों का, आजादी के मोहभंग का काल है । जिसकी स्पष्ट प्रतिध्वनि तत्कालीन साहित्य और सिनेमा में स्पष्ट सुनी जा सकती है । ''हिंदी सिनेमा में इस कालखंड में निरन्तर ऐसी फिल्मों का निर्माण हुआ, जो एक ओर नेहरू युग की आशावादिता को प्रकट करती थी और दूसरी ओर तत्कालीन विषम स्थितियों से उपजे मोहभंग व विद्रूपता को पूरी यथार्थता से रेखांकित करती थी ।''[20]

यहाँ हम स्वातंत्र्योत्तर हिंदी सिनेमा पर दृष्टिपात करेंगे -

सन् 1951 में राज कपूर ने आर. के. फिल्मस् के बैनर तले 'आवारा' फिल्म का निर्माण किया । इस फिल्म में आजाद भारत के नव सामाजिक गठन और अमीरी-गरीबी के

अंःकलहों को दर्शाया गया था । इस फिल्म में अपनी सशक्त भूमिकाओं से पृथ्वीराज कपूर, राज कपूर और नरगिस ने दर्शकों का दिल जीत लिया था । 'आवारा' के गानों को काफी पसंद किया गया । इस फिल्म के गाने आज भी सुने जाते है । इस फिल्म को व्यावसायिक सफलता के साथ-साथ अपार लोकप्रियता मिली । ''फिल्म 'आवारा' देश के साथ-साथ विदेशों में खासतौर पर तत्कालीन यू.एस.एस.आर., अरब देशों और आफ्रिका के कई शहरों में भी काफी लोकप्रिय और सफल फिल्म थी और जिसके कारण राज कपूर और नरगिस की रोमांटिक जोडी को भी दर्शकों ने काफी पसंद किया।''[21] इसी वर्ष हिंदी सिनेमा को एक कुशल और सामाजिक पारिवारिक फिल्में बनानेवाला फिल्मकार बदलेव राज चोपडा उर्फ बी.आर.चोपडा मिला । उन्होंने अपनी पहली फिल्म 'अफसाना' से हिंदी फिल्मी दुनिया में प्रवेश किया यह फिल्म अमीर और गरीब दो विपरित पारिवारिक माहौल में पले-बढे हमशक्ल भाईयों की कथा थी जिसमें अशोक कुमार और प्राण ने प्रभावशाली अभिनय किया था । फिल्म में स्वतंत्रता के बाद तेजी से भौतिकवादी बनते हुए सामाजिक परिवेश के अंतःकलहों को दर्शाया गया था । इसी वर्ष फिल्म 'बाजी' बनाकर फिल्म निर्देशक गुरुदत्त ने अपना फिल्मी सफर शुरु किया । इस फिल्म के मुख्य कलाकार थे देवानंद और गीता बाली । इसी वर्ष बनी फिल्म 'बहार' से वैजयंतीमाला का हिंदी फिल्मों में आगमन हुआ । इसी वर्ष नितिन बोस के निर्देशन में बनी फिल्म 'दीदार' एक प्रसिध्द फिल्म थी जिसमें दिलीप कुमार और नरगिस ने अभिनय किया था । इस फिल्म की कहानी प्रेम-त्रिकोण पर आधारित थी ।

सन् 1952 में बनी 'बैजू बावरा' एक संगीतमय सुपर हिट फिल्म थी । इस फिल्म की कथा ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित थी । भारत भूषण और मीना कुमारी के रोमांटिक अभिनय ने दर्शकों का दिल जीत लिया था । इस फिल्म के लगभग सभी गाने सुपरिहिट हुए थे । इसी वर्ष की सबसे मशहूर और बहुचर्चित फिल्म थी 'आन' । इसके निर्देशक थे महबूब खान । इस फिल्म के मुख्य कलाकार थे दिलीप कुमार, निम्मी और प्रेमनाथ । इसी वर्ष निर्देशक अमिया चक्रवर्ती ने 'दाग' फिल्म बनाई थी । यह फिल्म देवदास की कथा से प्रभावित प्रेम कथा पर आधारित थी । इसी फिल्म से अभिनेता दिलीप कुमार 'ट्रेजेडी कींग' के इमेज के साथ दर्शकों के बीच उभरकर सामने आए । इसी वर्ष गुरुदत्त के निर्देशन में एक

सफल फिल्म बनी 'जाल' । देवानंद और गीता बाली के अभिनय से सजी यह फिल्म रहस्य कथा पर आधारित थी ।सन् 1953 में निर्देशक राजा नवाथे ने 'आह' फिल्म बनाई । इसमें राज कपूर और नरगिस ने अभिनय किया था । इसी वर्ष 'अनारकली', 'झाँसी की रानी', जैसी ऐतिहासिक भूमि पर आधारित फिल्में भी प्रदर्शित हुई । इसी वर्ष निर्देशक बिमल रॉय की 'दो बीघा जमीन' जैसी प्रभावशाली फिल्म भी देखने को मिलती है । इस फिल्म में मुख्य भूमिकाएँ बलराज साहनी और निरूपमा रॉय ने निभाई थी । ''फिल्म की कथा प्रस्तुति और अद्‌भुत अभिनय क्षमताओं के कारण इस फिल्म को उस वर्ष की 'कान' में आयोजित अंतर्राष्ट्रिय फिल्म समारोह ओर कार्ली वेरी फिल्म समारोह में विशेष पुरस्कारों से सन्मानित किया गया था ।''[22] सन् 1954 गुरूदत्त के निर्देशन में बनी फिल्म 'आर-पार' एक प्रेमकथा पर आधारित थी । इसमें में गुरुदत्त ने अभिनय किया था । इस फिल्म को संगीत दिया था ओ.पी.नैय्यर ने । इस फिल्म के गीतों को आज भी पसंद किया जाता है । इसी वर्ष निर्देशक महबूब खान की फिल्म 'अमर' आयी थी । इसमे दिलीप कुमार के साथ अभिनेत्री मधुबाला ने अभिनय किया था । फणी मुजुमदार द्वारा निर्देशित फिल्म 'बागबान' भी इसी वर्ष बनी थी। इस फिल्म में अशोक कुमार, देवानंद और मीना कुमारी की भूमिकाएँ थी । इसी वर्ष बी.आर.चोपडा ने 'चाँदनी चौक' फिल्म का निर्माण किया था । इसी वर्ष आर.के बैनर तले बनी फिल्म 'बूट पॉलिश' प्रदर्शित हुई । इसके निर्माता राज कपूर थे और निर्देशक प्रकाश अरोडा थे । '' 'बुट पॉलिश' से राज कपूर ने यह साबित कर दिया था कि वह एक परम्परावादी फिल्मकार हर्गिज नहीं है और उन्हें समाज के हर उस विषयों पर फिल्मों का निर्माण करना अच्छा लगता है जिसका सीधा संबंध समाज और मानवीयता से रहा है ।''[23] सुप्रसिध्द फिल्म निर्देशक सोहराब मोदी ने इसी वर्ष 'मिर्जा गालिब' फिल्म का निर्माण किया। यह फिल्म मशहूर शायर मिर्जा गालिब के जीवन पर आधारित थी । इसमें सुरैय्या ने नायिका की भूमिका की थी । इसी वर्ष 'नागिन' फिल्म आयी । यह एक आदिवासी पृष्ठभूमि पर बनी प्रेमकथा थी । इसी वर्ष बिमल रॉय की फिल्म 'नौकरी' प्रदर्शित हुई । इस फिल्म में किशोर कुमार ने मुख्य भूमिका निभाई थी । इसी साल अन्य एक फिल्म 'टैक्सी ड्राइवर' भी

आयी थी जिसे चेतन आनंद ने निर्देशित किया था । इसमें मुख्य कलाकार थे देवानंद और कल्पना कार्तिक यह एक मनोरंजक फिल्म थी ।

सन् 1955 में फिल्म 'आजाद', 'देवदास', 'इंसानियत' और 'उडनखटोला' चार ऐसी फिल्में आयी जिसमें नायक दिलीप कुमार ने अलग अलग भूमिकाएँ निभाई ।इसी वर्ष निर्देशक गुरुदत्त ने 'मि.एंड मिसेस - 55' बनाई थी जिसमें गुरुदत्त के साथ मधुबाला ने मुख्य भूमिका निभाई थी । इसी वर्ष एक और सुपरहिट फिल्म बनी थी 'श्री 420' इस फिल्म को राज कपूर ने आर.के.फिल्मस् बैनर के तले निर्देशित किया था । इस फिल्म में राज कपूर और नरगिस की मुख्य भूमिका थी । ''श्री 420 ना सिर्फ भारत में सुपर हिट हुई बल्कि विदेशों में भी खूब पसंद की गई । इस फिल्म के गीतों में विशेष रूप से 'मेरा जूता है जापानी...' के कारण यह फिल्म तत्कालीन 'यु.एस.एस.आर.और चीन में भी काफी पसंद की गई ।''[24] सन् 1956 में राज खोसला के निर्देशन में बनी 'सी.आई.डी ' यह फिल्म रहस्य और रोमांच से भरपूर एक मनोरंजक फिल्म थी । इस फिल्म में देवानंद, वहिदा रहमान ने महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाई थी । इसी वर्ष राजकपूर की 'जागते रहो' आयी ।यह फिल्म अपने समय की एक प्रयोगात्मक और चर्चित हृदय को छू लेने वाली फिल्म थी ।

''सन् 1957 भारतीय हिंदी सिनेमा के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण वर्ष रहा है । इस वर्ष अन्य मनोरंजक हिंदी फिल्मों के अतिरिक्त चार ऐसी फिल्में आयी थी जो भारतीय हिंदी सिनेमा के इतिहास में अपना अति विशिष्ट स्थान रखती है । वे फिल्में थी व्ही.शांताराम की 'दो आँखे बारह हाथ', महबूब खान की 'मदर इंडिया', बी.आर.चोपडा की 'नया दौर' और गुरुदत्त की फिल्म 'प्यासा' ।''[25] इन चार महत्वपूर्ण फिल्मों के अतिरिक्त इसी वर्ष सुबोध मुखर्जी की फिल्म 'पेईंग गेस्ट' आयी । जिसमें देवानंद के साथ नूतन थी । इसी वर्ष शम्मी कपूर अभिनित और नासिर हुसैन निर्देशित फिल्म आयी थी 'तुम सा नहीं देखा' । इसी साल 'चलती का नाम गाडी' जैसी हास्यप्रधान और मनोरंजक फिल्में भी आयी जिन्हें दर्शकों ने बहुत पसंद किया । सन् 1958 में निर्देशक शक्ति सामंत की फिल्म 'हावडा ब्रिज' आयी जो एक 'क्राइम थ्रिलर' थी । इसी वर्ष बिमल रॉय ने 'मधुमति' फिल्म का निर्माण किया । रमेश

सहगल ने 'फिर सुबह होगी' यह फिल्म बनाई । इसमें माला सिन्हा ने अभिनय किया था । इसी वर्ष बिमल रॉय की 'यहूदी' फिल्म आयी । इसी साल की 'अनाडी', 'दिल देके देखो', 'गूँज उठी शहनाई' फिल्में व्यावसायिक दृष्टि से सफल रही । इसी वर्ष निर्देशक यश चोपडा 'धूल का फूल' इस फिल्म से हिंदी फिल्मी दुनिया में कदम रखा । यह एक सामाजिक विषय पर बनी उल्लेखनीय फिल्म थी । इस फिल्म के गीत साहिर लुधियानवी ने लिखे थे । इसी वर्ष निर्देशक बिमल रॉय की एक अनोखी और प्रगतिशील फिल्म 'सुजाता' बनी थी । फिल्म में नूतन और सुनील दत्त ने मुख्य भूमिकाएँ निभाई थी । इस वर्ष की सबसे मशहूर फिल्म थी गुरूदत्त की 'कागज के फूल' । इसमें गुरुदत्त के साथ वहिदा रहमान ने भुमिका निभाई थी । इसी वर्ष 'पैगाम' फिल्म आयी थी । इसमें दिलीप कुमार और राज कूमार ने अभिनय किया था । सन् 1960 में भी नाच गानों से भरे, रूमानी और सस्पेंस फिल्मों को दर्शको ने खूब पसंद किया । इसी वर्ष प्रदर्शित राज खोसला की फिल्म 'बंबई का बाबू' एक मनोरंजक फिल्म थी । इसमें देवानंद और सुचित्रा सेन ने अभिनय किया था । इसके बाद आयी गुरूदत्त की संगीतमय फिल्म 'चौदहवी' का चाँद। यह गुरूदत्त की पहली रंगीन फिल्म थी जिसमें वहिदा रहमान की सुंदरता को दर्शकों ने काफी पसंद किया । इसी वर्ष 'छलिया' फिल्म से मशहूर फिल्म निर्देशक मनमोहन देसाई ने अपने फिल्म निर्देशन की शुरुआत की । यह एक मनोरंजक फिल्म थी । 'जाली नोट', 'काला बाजार' भी इसी वर्ष की मनोरंजक फिल्मे रही है । सन् 1960 में ही राज कपुर की 'जिस देश में गंगा बहती है' और निर्देशक के असिफ की 'मुगले आजम' प्रदर्शित हुई । 'मुगले आजम' ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित सुपरहिट फिल्म थी । इस फिल्म के नायक थे दिलीप कुमार और नायिका थी मधुबाला । इस फिल्म में पृथ्वीराज कपूर ने 'अकबर' की भूमिका निभाई थी । जिसे लोग आज तक नहीं भूल पाए है । ''सम्राट अकबर की भूमिका में पृथ्वीराज कपूर ने अपनी अद्वितीय अद्‌भुत अभिनय क्षमता का प्रदर्शन करके सदा के लिए अकबर के चरित्र को पर्दे पर अमर कर गए । इस फिल्म के सेट्स, पोशाक, अभिनय अद्‌भुत संवाद और गीतों के फिल्मांकन के साथ-साथ लड़ाई के दृश्यों का संयोजन कुल मिलाकर इतना प्रभावशाली था कि उस वर्ष की यह सबसे बड़ी हिट फिल्म थी ।''[26]

सन् 1961 में निर्देशक अमरजीत की फिल्म 'हम दोनों' आयी इसमें देवानंद ने डबल रोल किया था । इसमें साधना और नंदा ये दो नायिकाएँ थी । इसी वर्ष 'जब प्यार किसी से होता है' यह संगीतमय रोमांटिक फिल्म आयी जिसका निर्देशन नासिर हुसैन ने किया था । इस फिल्म में आशा पारेख नायिका बनी थी । इसी साल में निर्देशक नितिन बोस की फिल्म 'गंगा जमुना' प्रदर्शित हुई । निर्देशक शंकर मुखर्जी ने किशोर कुमार और मधुबाला को लेकर 'झुमरु' फिल्म बनाई थी । इसी वर्ष सुबोध मुखर्जी की हिट फिल्म 'जंगली' आयी । इस फिल्म में शम्मी कपूर और सायरा बानो ने अभिनय किया था । इसी साल निर्देशक हेमेन गुप्ता की फिल्म आयी 'काबुलीवाला' । यह फिल्म रविंद्रनाथ टैगोर की कथा पर आधारित थी । बलराज साहनी ने मुख्य भूमिका निभाई थी । सन् 1962 में निर्देशक अबरार अल्वी की फिल्म, आयी 'साहब, बीबी और गुलाम' यह फिल्म बांगला साहित्यकार बिमल मित्र के सुप्रसिध्द उपन्यास पर आधारित थी । फिल्म में मुख्य भूमिकाएँ गुरूदत्त, मीना कुमारी और वहिदा रहमान ने निभाई थी । निर्देशक बीरेन नाग की फिल्म 'बीस साल बाद' इसी वर्ष आयी थी । यह एक रहस्य-रोमांच से भरपूर फिल्म थी । अन्य सफल फिल्मों में निर्देशक शक्ति सामंत की 'चाइना टाउन', निर्देशक विजय भट्ट की 'हरियाली और रास्ता', निर्देशक महेश कौल की फिल्म 'सौतेला भाई' । सन् 1963 की सबसे महत्वपूर्ण फिल्म थी निर्देशक बिमल रॉय की 'बंदिनी' । इस फिल्म में नूतन ने सर्वश्रेष्ठ अभिनय किया था । इस फिल्म के गीत काफी लोकप्रिय हुए थे । ''इस फिल्म में एक गीत 'मोरा गोरा अंग लइले...' से सुप्रसिध्द कवि और फिल्मकार गुलजार ने, एक गीतकार के रूप में अपना फिल्मी सफर शुरू किया था ।''[27] इसी वर्ष निर्देशक रावेल की 'महबूब' फिल्म प्रदर्शित हुई । बी.आर.चोपडा की 'गुमराह' भी इसी वर्ष आयी । इसके कलाकार थे अशोक कुमार, सुनील दत्त और माला सिन्हा । मनमोहन देसाई की 'ब्लफ मास्टर', बाबू भाई मिस्त्री की 'पारसमणि' और विश्राम बेडेकर की फिल्म 'रुस्तम-सोहराब' भी इसी वर्ष की सफल और मनोरंजक फिल्में थी । निर्देशक के.ए.अब्बास ने इसी साल 'शहर और सपना' फिल्म प्रदर्शित की । इसी समय निर्देशक विजय आनंद की फिल्म आयी 'तेरे घर के सामने' ।

सन् 1964 में निर्देशक शक्ति सामंत की फिल्म आयी 'कश्मीर की कली' इस फिल्म से शर्मिला टागोर का हिंदी फिल्मों में प्रवेश हुआ । इसी वर्ष निर्देशक के. शंकर की फिल्म आयी 'राजकुमार' इसमें शम्मी कपूर और साधना की भूमिकाएँ थी । इसी साल राजकपूर की फिल्म आयी 'संगम' । इस फिल्म में वैजयंतीमाला और राज कपूर ने अभिनय किया था । इसकी कथा प्रेम त्रिकोण पर आधारित थी । इसी वर्ष सत्येन बोस निर्देशित फिल्म 'दोस्ती' आयी । इसमें एक लँगडे और दूसरे अंधे दोस्त की कथा थी । इसी साल निर्देशक किदार शर्मा ने हिंदी के सुप्रसिध्द उपन्यास 'चित्रलेखा' पर इसी नाम से रंगीन फिल्म का निर्माण किया । इस फिल्म में अशोक कुमार और मीनाकुमारी ने मुख्य भूमिकाएँ निभाई थी । इस वर्ष रहस्य रोमांच कहानियों पर आधारित निर्देशक बीरेन नाग की 'कोहरा' और निर्देशक राज खोसला की फिल्म 'वो कौन थी' प्रदर्शित हुई। भारत-चीन युध्द (1962) पर आधारित निर्देशक चेतन आनंद की फिल्म 'हकीकत' भी इसी वर्ष आयी । किशोर कुमार की 'दूर गगन की छाँव' और सुनील दत्त की 'यादें' फिल्म भी अपने अलग प्रयोग के कारण जानी गई । सन् 1965 में के.ए.अब्बास की फिल्म 'आसमान महल' प्रदर्शित हुई । इसी वर्ष की और दो हिट फिल्में थी 'गाइड' और 'वक्त' । 'गाइड' के निर्देशक थे विजय आनंद और 'वक्त' फिल्म के निर्देशक थे यश चोपडा । गाईड में देवानंद और वहिदा रहमान ने प्रभावशाली अभिनय किया था । ''फिल्म 'गाईड' में व्यक्ति के भीतर की भावनाओं के अंतर्विरोधों और फिर उसका स्थितिपरक रूपांतरण की प्रस्तुति अत्यंत प्रभावशाली ढंग से की गई है। फिल्म 'गाईड' में देवानंद ने अपने जीवन का सर्वश्रेष्ठ अभिनय किया था ।''[28] सन् 1966 में निर्देशक विजय आनंद की फिल्म 'तीसरी मंजिल' एक सफल फिल्म थी । इसमें शम्मी कपूर के साथ आशा पारेख, हेलन और प्रेमनाथ ने मुख्य भूमिकाएँ निभाई थी । इसी वर्ष प्रेमचंद के 'गबन' उपन्यास पर इसी नाम से फिल्म बनीं । इस फिल्म में सुनील दत्त, साधना ने मुख्य भूमिकाएँ निभाई थी । इसी वर्ष फणीश्वरनाथ रेणु की कहानी .'तीसरी कसम' पर निर्देशक बासु भट्टाचार्य ने इसी नाम से फिल्म का निर्माण किया । फिल्म में राज कपूर और वहिदा रहमान ने मुख्य भूमिकाएँ निभाई थी । इसी वर्ष निर्देशक चेतन आनंद की फिल्म 'आखिरी खत' रीलिज हुई । इस फिल्म से राजेश खन्ना ने अपने फिल्मी कैरीयर की शुरुआत

की । सामाजिक प्रेमकथा पर आधारित निर्देशक हृषिकेश मुखर्जी की फिल्म 'अनुपमा' भी इसी वर्ष आयी । ए.आर.कारदार की 'दिल दिया दर्द लिया' भी इस वर्ष चर्चित रही ।

सन् 1968 में हृषिकेश मुखर्जी की फिल्म 'आशीवार्द' प्रदर्शित हुई । इस फिल्म में मुख्य भूमिका में अशोक कुमार । इसी वर्ष निर्देशक गोविंद सरैया की फिल्म 'सरस्वतीचन्द्र' भी आयी थी । यह एक गम्भीर प्रेमकथा थी । सुप्रसिध्द फिल्म निर्देशक प्रकाश मेहरा की पहली फिल्म 'हसीना मान जाएगी' भी हसी वर्ष आयी थी जिसमें नायक थे शशी कपूर और नायिका थी बबीता । यह एक मनोरंजनात्मक फिल्म थी । इसी साल निर्देशक ज्योति स्वरूप की हास्य फिल्म 'पडोसन' रीलिज हुई । इसमें किशोर कुमार, महमूद, सुनील दत्त और सायरा बानो मुख्य भूमिका में थे । इसी वर्ष निर्देशक रावेल की फिल्म 'संघर्ष' आयी जो महाश्वेता की रचना पर आधारित थी । इस फिल्म में कलाकार थे बलराज साहनी, दिलीप कुमार, संजीव कुमार, वैजयंतीमाला । सन् 1969 में आयी निर्देशक शक्ति सामंत की फिल्म 'आराधना' एक सुपरहिट फिल्म थी, इसी फिल्म से राजेश खन्ना सुपरस्टार के तौर पर उभरकर आये थे । इस फिल्म में उनके साथ शर्मिला टैगोर और फरीदा जलाल मुख्य भूमिकाओं में थी । इसी वर्ष निर्देशक राज खोसला की 'दो रास्ते' फिल्म रीलिज हुई थी । इस फिल्म में राजेश खन्ना के साथ मुमताज, बलराज साहनी, प्रेम चोपडा और बिंदु ने मुख्य भूमिकाएँ निभाई थी । इसी वर्ष राजेश खन्ना की फिल्म 'बंधन' भी आयी थी । ''सन् 1969 का भारतीय हिंदी सिनेमा में एक खास महत्व रहा है । इसके कई महत्वपूर्ण कारण रहे हैं । इसमें एक था समानांतर सिनेमा का उदय होना जिसने आनेवाले वर्षों में भारतीय हिंदी सिनेमा के अब तक के स्वरूप को अधिक सार्थक, सामाजिक और आम आदमियों की कथा कहने का एक सकारात्मक प्रयास किया था ।''[29] इसी वर्ष भारत सरकार द्वारा एन.एफ.डी.सी अर्थात 'राष्ट्रीय फिल्म वित्त निगम' की स्थापना की गई थी । इसके माध्यम से अच्छे विषयों पर आधारित आम जीवन की समस्याओं को उजागर करनेवाली फिल्मों के निर्माण के लिए आर्थिक सहायता देना आरम्भ किया था ।

2.3.3 समानांतर हिंदी सिनेमा -

सन् 1969 में हिंदी सिनेमा दो भागों में बँट गया । एक मुख्यधारा का हिंदी सिनेमा और दूसरा समानांतर हिंदी सिनेमा । समानांतर सिनेमा को पेरैलल सिनेमा, कला सिनेमा, नव सिनेमा, यथार्थवादी सिनेमा, गैर व्यावसायिक सिनेमा आदि कई नाम दिए गए । समानांतर सिनेमा की शुरुआत सन् 1969 में प्रदर्शित तीन हिंदी फिल्मों से हुई। ये तीन फिल्में थी... निर्देशक मृणाल सेन की 'भुवनशोम', मणि कौल की 'उसकी रोटी' और बासु चटर्जी की 'सारा आकाश' । ये तीनों फिल्में एन.एफ.डी.सी. के आर्थिक सहयोग से बनाई गई थी । यहाँ से शुरू हुई व्यावसायिक मुख्यधारा की लोकप्रिय फिल्मों के समानांतर कला फिल्मों की नई धारा जो धीरे-धीरे प्रतिबध्द कलाकारों, निर्माता और निर्देशकों के सहयोग से एक आंदोलन के रूप में अग्रसर होती चली गई । ''एक तरफ बडी-बडी बजटों की, आम लोगों के रंग बिरंगे सपनों को सँजोए हुए, नाच-गाना प्रेम कहानियों और मारपीट से भरपूर, दर्शकों के लिए उनका पूरा पैसा वसूल के सिध्दान्त पर फिल्में बनती रहीं और ठीक इसके समानांतर शुरू हुई कम बजट की फिल्मों का निर्माण जिसमें आम लोगों के जीवन पर देश की विकराल राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक समस्याओं से प्रभावित और यथार्थवादी कथाओं पर आधारित सार्थक कला फिल्में शामिल थी । फिल्मों का यह स्वरूप, इनकी भाषा और प्रस्तुति भारतीय लोकप्रिय सिनेमा देखने के आदि दर्शकों के लिए सर्वथा नया था । धीरे-धीरे नई धारा की इस समानांतर फिल्मों का निर्माण हिंदी भाषा के अतिरिक्त देश की अन्य क्षेत्रीय भाषाओं में भी होने लगा ।''[30]

समानांतर फिल्मों की कथाओं में मुख्य रूप से जमींदार या पूँजीपतियों द्वारा गाँव के मजदूरों का आर्थिक और सामाजिक शोषण, अंधविश्वास और धार्मिक रूढ़िवादी मिथकों के विरूध्द यथार्थ की पृष्ठभूमि, महानगरों में गरीब और मध्यवर्गीय परिवारों की सामाजिक और आर्थिक दुर्दशा, मिल-मजदूरों की समस्याएँ, गाँव के सामंती शासकों द्वारा गरीब परिवारों और दलित वर्ग की औरतों का शारीरिक शोषण, युवा वर्ग के अंदर बढ़ती हुई असंतोष की भावना, छूत-अछूत जैसे भेदभाव, बेकारी की समस्या, 'रोजगार की तलाश में' महानगरों में

पलायन कर रहे लोगों के दुःख दर्द आदि जैसी कई मानवीय और सामाजिक समस्याओं पर आधारित विषय वस्तु का समावेश अधिकांशतः हुआ करता था । ''सिनेमा की इसी प्रभावशाली प्रस्तुति के कारण विदेशों में भारतीय सिनेमा का आकर्षण बढ़ने लगा था । कई अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोहों में तत्कालीन नई धारा की अनेक कलात्मक फिल्मों को विभिन्न पुरस्कारों से सम्मानित भी किया गया था । इन फिल्मों के प्रति विदेशी प्रबुध्द सिनेमा दर्शकों का खास वर्ग भी तेजी से आकर्षित होने लगा था ।''[31]

समानांतर हिंदी सिनेमा के बाईस से पच्चीस सालों के अस्तित्व में अनेक बेहतरीन, मानवीय, सामाजिक और राजनीतिक विषयों पर आधारित अर्थपूर्ण फिल्मों का निर्माण हुआ । यहाँ हम समानांतर सिनेमा की कुछ महत्वपूर्ण फिल्मों का उल्लेख करेंगे - सन् 1973 में भारतीय हिंदी सिनेमा के सुप्रसिध्द फिल्म निर्देशक श्याम बेनेगल ने 'अंकुर' फिल्म बनाई थी। इसी फिल्म से उन्होंने हिंदी फिल्म की दुनिया में अपना पहला कदम रखा । इस फिल्म से सुप्रसिध्द सिने अभिनेत्री शबाना आझमी ने अपने फिल्मी कैरियर की शुरुआत की थी । 'अंकुर' फिल्म को दर्शकों ने काफी पसंद किया था । 'अंकुर' आंध्र प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में जमींदारों द्वारा दलित खेतिहर मजदूर और उसकी पत्नी के शारिरीक शोषण पर आधारित एक शक्तिशाली कथा पर बनी महत्वपूर्ण फिल्म थी । ''अंकुर के अंतिम दृश्य में गाँव के एक छोटे बच्चे को एक पत्थर फेंककर जमींदार की खिड़की के काँच को तोड़ते हुए दिखलाया गया है, यह उस घिनौने सामंती व्यवस्था के प्रति विरोध की एक प्रतिकात्मक अभिव्यक्ति है।''[32] इसी वर्ष निर्देशक सथ्यू की फिल्म 'गरम हवा' आयी जो भारत-पाक विभाजन की पृष्ठभूमि पर आधारित थी । इस फिल्म में मानवीय मूल्यों की मार्मिक अभिव्यक्ति की गई थी। बलराज साहनी ने इसमें प्रभावशाली भूमिका निभाई थी । इसी वर्ष निर्देशक अवतार कौल फिल्म की आयी थी 'सत्ताईस डाऊन' । इस फिल्म से राखी ने अपने अभिनय कैरियर की शुरूआत की थी । सन् 1974 में श्याम बेनेगल ने 'चरणदास चोर' फिल्म बनाई । फिर सन् 1976 में श्याम बेनेगल ने 'भूमिका' फिल्म बनाई । यह अत्यंत प्रभावशाली फिल्म थी। उस समय की मराठी और हिंदी सिनेमा की सुप्रसिध्द नायिका हंसा वाडकेर की आत्मकथा 'सांगत्ये ऐका' पर यह फिल्म आधारित थी । ''इस फिल्म के माध्यम से मुंबई फिल्म जगत्

में महिला कलाकारों के साथ फिल्म क्षेत्र के लोगों द्वारा ही किए गए शोषण की व्यथा को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से कहा गया है ।''[33] 'भूमिका' में स्मिता पाटील ने अपने जीवन का सर्वश्रेष्ठ अभिनय किया है । इस फिल्म में अमोल पालेकर, नसीरुद्दीन शाह और अमरीश पुरी ने यादगार अभिनय किया था । इसी वर्ष मृणाल सेन ने 'मृगया' फिल्म का निर्माण किया था । यह हिंदी फिल्मों के कलाकार मिथुन चक्रवर्ती की पहली फिल्म थी । इसमें उन्होंने एक आदिवासी क्रांतिकारी की भूमिका की थी । इसी वर्ष श्याम बेनेगल ने फिर एक फिल्म 'जूनून' का निर्माण किया । यह एक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित भावनात्मक फिल्म थी । इस फिल्म के नायक थे शशी कपूर । सन् 1979 में के.ए.अब्बास ने प.बंगाल के नक्सल समस्याओं पर आधारित 'द नेक्सेलाइटस' फिल्म बनाई । इस फिल्म में मुख्य भूमिकाएँ मिथुन चक्रवर्ती और स्मिता पाटील ने निभाई थी ।

सन् 1980 में सुप्रसिध्द हिंदी फिल्मकार गोंविंद निहलानी ने 'आक्रोश' फिल्म से हिंदी फिल्मी दुनिया में प्रवेश किया । वैसे गोविंदजी 'कैमरामन' के तौर पर हिंदी दुनिया में बहुत पहले ही आगमन कर चुके थे ।श्याम बेनेगल की कई फिल्मों के वे सिनेमैटोग्राफर भी रह चुके है । लेकिन बतौर निर्देशक उन्होंने 'आक्रोश' फिल्म से शुरूआत की । यह फिल्म आदिवासियों और सामंतो के अंतर्कलह और शोषण पर आधारित कथा पर बनी थी । यह फिल्म अभिनेता ओमपुरी की पहली फिल्म थी । इस फिल्म को दर्शकों ने बहुत पसंद किया। यह एक सफल फिल्म थी । इसी वर्ष निर्देशक रवींद्र धर्मराज ने 'चक्र' फिल्म बनाई यह फिल्म जयवंत दलबी की मराठी कादंबरी 'चक्र' पर आधारित थी । इसमें मुंबई महानगर में सडकों के किनारे बसे झोपडपट्टियों में किडे मकौड़े की तरह जिंदगी बिताने वाले लोगों की कडवी सच्चाई को दर्शाया गया था । इसी वर्ष मणि कौल ने हिंदी के साहित्यकार गजानन माधव मुक्तिबोध की रचना पर आधारित 'सतह से उठता अदमी' बनाई थी । सन् 1981 में निर्देशक अशोक आहूजा की फिल्म 'आधारशिला' आयी थी । इसी वर्ष भारतीय सिनेमा के महान फिल्म निर्देशक सत्यजित रे ने 'सद्गति' फिल्म बनाई। इसके पहले भी वे प्रेमचंद की कहानी पर 'शतरंज के खिलाडी' फिल्म बना चुके थे । सन् 1983 में निर्देशक कुंदन शाह की पहली फिल्म 'जाने भी दो यारों' आयी थी, जिसमें मुख्य भूमिकाएँ नसीरूद्दीन शाह,

पंकज कपूर, सतीश शाह और नीना गुप्ता ने निभाई थी । इसी वर्ष निर्देशक मृणाल सेन ने 'खण्डहर' फिल्म का निर्माण किया था । इसी वर्ष निर्देशक गोविंद निहलानी ने 'अर्ध्दसत्य' फिल्म बनाई थी । इस फिल्म में नसीरूद्दीन शाह, स्मिता पाटील, अमरीश पुरी, सदाशिव अमरापूरकर ने मुख्य भूमिकाएँ निभाई थी । यह फिल्म एक सफल फिल्म के रूप में जानी जाती है । इसी साल दिलीप चित्रे की फिल्म 'गोदाम' आयी । इसी वर्ष प्रसिध्द फिल्मकारों केतन मेहता ने अपनी पहली फिल्म 'होली' का निर्माण किया । इसी वर्ष श्याम बेनेगल ने 'मंडी' फिल्म बनाई थी । जो वेश्याओं के जीवन पर आधारित सुप्रसिध्द फिल्म थी । सन् 1984 में निर्देशक सईद अख्तर मिर्जा की आयी फिल्म 'मोहन जोशी हाजिर हो' । इसके पहले वे 'अलबर्ट पिंटो को गुस्सा क्यों' आता है ये महत्वूपर्ण फिल्म बना चुके थे । इसी वर्ष बनीं 'पार' निर्देशक गौतम घोष की पहली हिंदी फिल्म थी। इसी वर्ष प्रकाश झा की फिल्म 'दामुल' आयी । यह एक सफल फिल्म थी । इसी वर्ष कुमार शाहनी की फिल्म 'तरंग' आयी थी ।

सन् 1985 में निर्देशक केतन मेहता की फिल्म 'मिर्च-मसाला' प्रदर्शित हुई । यह फिल्म अंग्रेजी हुकूमत की पृष्ठभूमी पर बनी थी । इस फिल्म में भारतीय मूल के एक व्यभिचारी अफसर को गाँव में टैक्स वसूली करते हुए जोर-जबरदस्ती करने और औरतों के साथ शारीरिक शोषण करने जैसे अनैतिक कामों में मशगूल दिखाया गया है। फिल्म के अंत में गाँव की सभी महिलाएँ एकजूट होकर इस अफसर की आँखो में मिर्च-मसाला डालतीं हैं । सन् 1988 में निर्देशक गोविंद निहलानी ने 'तमस' फिल्म का निर्माण किया । तमस की कथा भारत-पाक विभाजन की त्रासदी पर आधारित थी । हिंदी के सुप्रसिध्द कथाकार भीष्म साहनी के 'तमस' उपन्यास को आधार बनाकर इस फिल्म का निर्माण किया गया था । यह एक अत्यंत प्रभावशाली फिल्म थी । इसे अभूतपूर्व सफलता हासिल हुई । इस फिल्म में स्वयं भीष्म साहनी, दीपा साही, ओमपुरी, दीपा पाठक और पंकज कपूर जैसे कलाकारों ने अभिनय किया था । इसी वर्ष निर्देशक मृणाल सेन की फिल्म 'एक दिन अचानक' आयी थी। इस फिल्म में मुख्य भूमिकाएँ शबाना आझमी, डॉ.श्रीराम लागू, अपर्णा सेन ने निभाई थी। इसके बाद 1989 ई में फिल्मकार बुध्ददेव दास गुप्ता की फिल्म 'बाघ बहादुर',

निर्देशक परवेज मेरवान की फिल्म 'परसी', निर्देशक माणि कौल की फिल्म 'नजर' और सईद अख्तर मिर्जा की फिल्म 'सलीम लँडे पर मत रो' समानांतर हिंदी सिनेमा की शृंखला में विशेष रूप से उल्लेखनीय फिल्में रही है । सन् 1990 मे गोविंद निहलानी ने 'दृष्टि' फिल्म का निर्माण किया था । इस फिल्म की कथा आधुनिक समाज में स्त्री-पुरुष के आपसी संबंधो की बदलती हुई परिभाषा को एक अलग ढंग से अभिव्यक्त करती है । इसी वर्ष गिरीश कासरवल्ली की फिल्म 'एक घर' भी आयी थी । इसी वर्ष की एक अन्य फिल्म थी निर्देशक कुमार शाहनी की 'कस्बा' जिसमें शत्रुघ्न सिन्हा और मीता वशिष्ठ ने मुख्य भूमिकाएँ निभाई थी । इसी वर्ष निर्देशक तपन सिन्हा की एक फिल्म आयी 'एक डॉक्टर की मौत', इस फिल्म में पंकज कपूर और शबाना आजमी ने प्रभावशाली भूमिकाएँ निभाई थी ।

सन् 1991 में निर्देशक सुधीर मिश्रा की फिल्म आयी 'धारावी' । यह फिल्म मुंबई की सबसे बड़ी झोपडपट्टी 'धारावी' में रहने वाले लोगों की कथा-व्यथा को दर्शाती है । धारावी केवल मुंबई की ही नहीं तो एशिया की सबसे बड़ी झोपडपट्टी है । इसी वर्ष निर्देशक अरुण कौल की फिल्म आयी थी 'दीक्षा' । इस फिल्म में हरिजन की भूमिका अभिनेता नाना पाटेकर ने निभाई थी । सन 1992 में निर्देशक श्याम बेनेगल की फिल्म आयी 'सूरज का सातवाँ घोडा' यह फिल्म धर्मवीर भारती के उपन्यास पर आधारित थी । अपने अभिनव प्रयोग के कारण यह फिल्म बहुचर्चित रही । सन् 1992 तक आते-आते समानांतर हिंदी सिनेमा का आंदोलन समाप्त हो गया, भले ही समानांतर सिनेमा का दौर यहाँ तक आते आते लगभग समाप्त हो गया हो लेकिन इस समय की फिल्मों ने लोगों को सोचने पर बाध्य जरूर किया ।ये फिल्में समाज से पूरी तरह जुड़ी हुई थी । इसमें कोई न कोई सामाजिक संदेश होता था। ''सन् 1969 से आरम्भ हुए और सन 1992 तक लगभग समाप्त हो चुके इस नई धारा की समानांतर फिल्मों ने सिनेमा के एक खास दर्शक वर्ग को एक नई और सृजनात्मक सोच अवश्य दी । लेकिन सिनेमा की इस नई धारा को प्रतिबध्द दर्शकों का विशाल समूह कभी नहीं मिल पाया जिससे अंततः यह आंदोलन एक दूरी तय करके ठप्प हो गया । व्यावसायिक सिनेमा के एक बड़े वितरक वर्ग को इन फिल्मों के वितरण के प्रति हमेशा उदासीन ही देखा गया ।''[34]

समानांतर सिनेमा विफल होने के कई कारण दिए जाते हैं । तरह-तरह की बातें की जाती है । ''नवसिनेमा आंदोलन में भले ही अनेक कमियां रही हो और यह समय से पूर्व ही क्षीण पड़ गया हो फिर भी इसमें संदेह नहीं की भारतीय सिनेमा को बदलने में इसकी ऐतिहासिक भूमिका रही है ।''[35]

2.3.4 मुख्यधारा का हिंदी सिनेमा -

सत्तर के दशक में हो रहे राजनीतिक और सामाजिक उथल-पुथल का व्यापक प्रभाव भारतीय सिनेमा की अभिव्यक्ति पर पडा । हिंदी सिनेमा दो धाराओं में बँट गया । एक ओर समानांतर या कलात्मक फिल्मों का निर्माण होने लगा तो दूसरी ओर मुख्यधारा या व्यावसायिक सिनेमा का निर्माण होने लगा । मुख्यधारा की फिल्में शुरू से ही बन रही थी । इसके पहले नहीं बन रही थी ऐसी बात नहीं है । लेकिन यहाँ तक आते-आते लोकप्रिय व्यावसायिक हिंदी सिनेमा की कथावस्तु, प्रस्तुतीकरण और तकनीक सभी में बड़े पैमाने पर बदलाव की प्रक्रिया शुरू हो गई थी । वर्तमान सिनेमा के बीज हमें सत्तर के दशक की मुख्यधारा की हिंदी फिल्मों में देखने को मिलते हैं ।

सन 1970 में निर्देशक ऋषिकेश मुखर्जी ने 'आनंद' फिल्म बनाई । इसके नायक थे उस समय के सुपरस्टार राजेश खन्ना । इस फिल्म में राजेश खन्ना के साथ सह-भूमिका के रूप में अमिताभ बच्चन थे । उस समय तक अमिताभ को नायक के रूप में पहचान नहीं मिली थी । इसी वर्ष 'गुड्डी' फिल्म आयी । इसी फिल्म से 'जया भादुडी' बाद में अमिताभ बच्चन की पत्नी बनी जया बच्चन ने अपने फिल्मी कैरीयर का आरम्भ किया था । इस फिल्म में हिरो की भूमिका में थे धर्मेंद्र । इसी वर्ष 'अंदाज' और 'दुश्मन' फिल्में प्रदर्शित हुई थी । सन् 1971 में देवानंद की 'हरे राम हरे कृष्ण', कमाल अमरोही की फिल्म 'पाकिजा' आयी । इसी वर्ष सुनील दत्त की 'रेशमा और शेरा' आयी इस फिल्म में अमिताभ बच्चन ने छोटी लेकिन प्रभावशाली भूमिका निभाई थी । सन् 1972 में 'राजा-रानी', 'सीता और गीता' यह दो बडी हिट फिल्में आयी । निर्देशक थे रमेश सिप्पी । नायिका हेमामालिनी थी और नायक धर्मेंद्र थे । सन 1973 में आयी निर्देशक राजकपूर की 'बॉबी' फिल्म उस समय की

सुपरहिट फिल्म थी । फिल्म के नायक थे ऋषि कपूर और नायिका थी डिंपल कपाडिया । दोनों ने अपने फिल्मी कैरीयर की शुरुआत 'बॉबी' से की । इसी वर्ष आयी निर्देशक प्रकाश मेहरा की फिल्म 'जंजीर' से हिंदी फिल्म इंडस्ट्री को अमिताभ बच्चन के रूप में एक प्रभावशाली कलाकार मिला । जिसने अगले तीन-चार दशकों तक मुख्यधारा के हिंदी सिनेमा पर राज किया । इसी वर्ष आयी अन्य फिल्मों में है - निर्देशक ऋाषिकेश मुखर्जी की 'नमक हराम', यश चोपडा की 'दाग', नासिर हुसैन की 'यादों की बारात' । सन् 1974 में निर्देशक मनमोहन देसाई की 'रोटी' और निर्देशक मनोज कुमार की फिल्म 'रोटी, कपडा और मकान' ये दोनों फिल्में हिट रही । सन् 1975 में निर्देशक रमेश सिप्पी की फिल्म 'शोले' प्रदर्शित हुई । इस फिल्म ने इतिहास बनाया । यह फिल्म सुपर-डुपर हिट रही । इस फिल्म के कलाकार थे - अमिताभ बच्चन, धर्मेंद्र, संजीव कुमार, अमजद खान, हेमामालिनी, जया भादुडी आदि । इसी वर्ष निर्देशक यश चोपडा की फिल्म आयी 'दीवार' । इस फिल्म में मुख्य भूमिकाओं में थे अमिताभ बच्चन, शशी कपूर और निरूपा रॉय । 'दीवार' फिल्म अभिनेता अमिताभ बच्चन के पूरे फिल्मी कैरीयर की एक महत्वपूर्ण फिल्मों में से एक है। सन् 1976 में यश चोपडा की 'कभी-कभी' फिल्म आयी । इसी वर्ष प्रकाश मेहरा की फिल्म 'हेरा-फेरी' रीलिज हुई । सन् 1977 में निर्देशक मनमोहन देसाई की दो सुपरहिट फिल्में आयी । 'धर्मवीर' और 'अमर अकबर एंथोनी' । सन् 1978 तक आते-आते अमिताभ बच्चन हिंदी फिल्मी दुनिया पर पूरी तरह से छा गए थे । इस वर्ष आयी तीनों हिट फिल्मों के नायक अमिताभ बच्चन ही थे । यह फिल्में थी - यश चोपडा की 'त्रिशूल' प्रकाश मेहरा की, 'मुकद्दर का सिकंदर' और निर्देशक चंद्रा बारोट की 'डॉन' । सन् 1979 में आयी दो बडी हिट फिल्मों के नायक भी अमिताभ बच्चन ही थे । ये फिल्में थी यश चोपडा की 'काला पत्थर' और निर्देशक राकेश कुमार की फिल्म 'मिस्टर नटवरलाल' । सन् 1980 की सबसे अधिक चर्चित और सफल फिल्म थी, निर्देशक बी.आर.चोपडा की 'इंसाफ का तराजु'।

सन् 1981 यह वर्ष मुख्यधारा की हिंदी फिल्मों के लिए एक अत्यंत सफल, सुनहरा और ऐतिहासिक वर्ष रहा है । इस वर्ष कुल आठ ऐसी फिल्में आयी जो सुपरहिट रही । उनमें से पाँच फिल्मों के नायक अमिताभ बच्चन थे । ये फिल्मे थी निर्देशक मनमोहन देसाई

की 'नसीब' यश चोपडा की 'सिलसिला' जिसमें नायिका थी रेखा और जया बच्चन । निर्देशक मनोज कुमार की देशभक्ति की भावना से भरपूर फिल्म 'क्रांति' प्रदर्शित हुई । इस फिल्म में स्वयं मनोज कुमार, दिलीप कुमार, शत्रूघ्न सिन्हा और हेमामालिनी नें अभिनय किया था । निर्देशक राज सिप्पी की 'सत्ते पे सत्ता' टीनू आनंद की 'कालिया' । इस फिल्म की नायिका थी परवीन बॉबी । निर्देशक राहुल रावेल की फिल्म 'लव स्टोरी' के.बालचंदर की 'एक दूजे के लिए' इस फिल्म के अभिनेता थे तमिल फिल्म के मशहुर हिरो कमल हसन । इस फिल्म में उनकी नायिका थी रति अग्निहोत्री । निर्देशक मुजफ्फर अली की 'उमराव जान' फिल्म काफी सफल फिल्म थी । 'उमराव जान' की भूमिका में थी अभिनेत्री रेखा । सन् 1982 में निर्देशक प्रकाश मेहरा की फिल्म आयी 'नमक हलाल' । नायक थे अमिताभ बच्चन । इसी वर्ष निर्देशक सुभाष घई की फिल्म आयी 'जंग', जिसमें नूतन प्रमुख भूमिका में थी । सन् 1983 में तीन बड़ी हिट फिल्में आयी - निर्देशक मनमोहन देसाई की 'कुली'। सुभाष घई की 'हिरो' । इस फिल्म से जैकी श्राफ हिंदी फिल्मों में आए । राहुल रावेल की 'बेताब' जिसमें धर्मेंद्र के पुत्र सन्नी देओल नायक थे । यह उनकी पहली फिल्म थी ।सन् 1985 में तीन बड़ी फिल्में प्रदर्शित हुई - मनमोहन देसाई की 'मर्द' एन. चंद्रा की 'अंकुश' इस फिल्म में नाना पाटेकर ने अभिनय किया था । यह उनकी पहली फिल्म थी । इस वर्ष की सबसे सफल फिल्मों में थी राज कपूर की 'राम तेरी गंगा मैली' जिसमें राजीव कपूर और मंदाकिनी की भूमिकाएँ थी । यह इन दोनों की पहली फिल्म थी ।

सन् 1986 में निर्देशक सुभाष घई की फिल्म 'कर्मा' रीलिज हुई । यह एक बहुत ही सफल फिल्म थी । इसमें दिलीप कुमार, नसीरूद्दीन शाह, जैकी श्राफ, अनिल कपूर और अनुपम खेर, नूतन ने अभिनय किया था । सन् 1987 की सबसे अधिक सफल फिल्म थी निर्देशक शेखर कपूर की 'मिस्टर इंडिया' । इस फिल्म के नायक अनिल कपूर और नायिका श्रीदेवी थी । खलनायक अमरीश पुरी थे । उन्होंने इस फिल्म में 'मोगैंबो' चरित्र को अमर बनाया । सन् 1988 में दो अत्यंत सफल फिल्में प्रदर्शित हुई - निर्देशक एन.चंद्रा की 'तेजाब' । जिसमें अनिल कपूर और माधुरी दिक्षित ने गजब का अभिनय किया था । दूसरी फिल्म थी नासिर हुसैन की 'कयामत से कयामत तक' । यह एक किशोर प्रेम कथा पर

आधारित फिल्म थी । इसी फिल्म से सुप्रसिध्द अभिनेता अमिर खान ने अपने फिल्मी कैरीयर की शुरूआत की थी । इस फिल्म में अमिर की नायिका थी जुही चावला । सन् 1989 में युवाओं की प्रेमकथा पर आधारित राजश्री प्रोडक्शन, के बैनर पर बनी, निर्देशक सूरज बडजात्या की फिल्म 'मैने प्यार किया' । इस फिल्म के नायक सलमान खान और नायिका भाग्यश्री की यह पहली फिल्म थी । इस फिल्म का गीत-संगीत काफी लोकप्रिय हुआ था । इसी वर्ष सुभाष घई की फिल्म 'राम-लखन' आयी । सन् 1990 में तीन अति सफल फिल्में आयी । ये फिल्में थी - निर्देशक इंद्र कुमार की 'दिल' । राजकुमार संतोषी की 'घायल' जिसके नायक सन्नी देओल थे और नायिका थी मिनाक्षी शेषाद्री । इसी वर्ष निर्देशक मुकुल आनंद की फिल्म 'अग्निपथ' आयी थी । फिल्म काफी चर्चित हुई अगर सफल नहीं हो सकी। नायक थे अमिताभ बच्चन । यह फिल्म दर्शकों के उपर अमिताभ बच्चन की, अन्य फिल्मों की तरह करिश्माई असर नहीं दिखा पाई । सन् 1990 के बाद अमिताभ बच्चन अभिनित फिल्में 'हम', 'खुदा गवाह', 'आखिरी रास्ता' आदि सफल रहीं ।

2.3.5 भूमंडलीकरण के आरम्भिक दौर में हिंदी सिनेमा -

'भूमंडलीकरण' जैसा की इसके नाम से ही प्रतिध्वनित होता है कि भूमंडलीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसका क्षेत्र समस्त भूमंडल है । अर्थात् इस प्रक्रिया के तहत स्थानगत प्रतिबंध या सिमाएँ नहीं होगी । इस प्रकार भूमंडलीकरण एक ऐसी भौगोलिक प्रक्रिया है जो राष्ट्र-राज्य की सीमाओं का अतिक्रमण करती है, भौगोलिक प्रक्रिया के साथ-साथ भूमंडलीकरण मुख्यतः एक आर्थिक प्रक्रिया है । भूमंडलीकरण की प्रमुख विशेषता पूँजी और व्यापार का उदारीकरण है । आर्थिक विकास के संदर्भ में भूमंडलीकरण का अर्थ है किसी देश की अर्थव्यवस्था को अन्य देशों की अर्थव्यवस्था से जोड़कर उसे विश्वव्यापी बनाना । इसके लिए सभी वस्तुओं के आयात की खुली छूट, सीमा छूट, सीमा शुल्क में कमी, विदेशी पूँजी के मुक्तप्रवाह की अनुमति, सेवा क्षेत्र विशेषकर बैंकिंग, बीमा तथा जहाज क्षेत्रों में पूँजीनिवेश आदि उदार अर्थनीतियों को अपनाना आवश्यक है । ''टेलीविजन एवं संचार के अन्य साधनों में क्रांतिकारी परिवर्तन नब्बे के दशक में हुए उपग्रहीय संचार तंत्र की सहायता

से भारत में पूँजीवादी संस्कृति एवं सोच का प्रचार-प्रसार तीव्रता से बढा । जिसमें सिनेमा ने भी विशिष्ट भूमिका निर्वाह की । वस्तुतः सन् 1992 के पश्चात भारत में वैश्विक संस्कृति के प्रचार-प्रसार का मुख्य कारण था इस वर्ष में पी.बी.नरसिंह राव सरकार द्वारा लिया गया वह निर्णय जिसने विदेशी कंपनियों के लिए भारत के द्वार खोल दिए थे, फलस्वरूप भारत में अत्यन्त तीव्रता व व्यापक स्तर पर विदेशी निगमों द्वारा पूँजी निवेश हुआ एवं बाजारवाद व उपभोक्तावाद की स्थापना हुई । तत्कालीन परिदृश्य में संचार के विभिन्न माध्यमों के साथ हिंदी सिनेमा ने भी उपभोक्तावाद की स्थापना पर विशेष बल दिया ।''[36]

आर्थिक उदारीकरण और भारत के बाजार में विदेशी और बहुराष्ट्रीय कंपनियों को प्रवेश दिए जाने के बाद बाजार पर व्यावसायिक कंपनियों के बीच स्पर्धा तेज हो गई । इन कंपनियों ने अपने उत्पादों को बढ़ावा देने के लिए, उसे बेचने के लिए तरह -तरह के तरीके अपनाएँ । इसके लिए उन्होंने जनसंचार माध्यमों का सहारा लिया । इसी कारण अखबारों, पत्रिकाओं और जनमाध्यमों में विज्ञापन छाने लगे । लोगों में उपभोग की प्रवृत्ति को बढ़ावा देने के लिए टेलीविजन पर प्रसारित होनेवाले कार्यक्रमों का भी सहारा लिया गया । इस कारण कभी मनोरंजन और अच्छे जीवन संदेश देनेवाले धारावाहिक आज भारतीय संस्कृति और मूल्यों के साथ खिलवाड़ करते हुए उपभोक्तावाद को बढ़ावा दे रहे हैं । ऐसा केवल टेलीविजन के साथ नहीं हुआ समाचार पत्र, फिल्मों और कुछ हद तक साहित्य के साथ भी हुआ है । ''वस्तुतः 1992 के बाद का समय वैश्विक स्तर पर पूँजीवाद के वर्चस्व का युग है । सोवियत संघ के विघटन के पश्चात् विश्व में एकमात्र महाशक्ति 'अमेरिका' ने समस्त विश्व पर अपना पूँजीवादी वर्चस्व बढ़ाना प्रारम्भ किया । 'ग्लोबल विलेज' का स्वप्न दिखाकर अपनी उत्पादित वस्तुओं का प्रचार-प्रचार कर उसने सम्पूर्ण विश्व को 'ग्लोबल सुपर मार्केट' बना दिया । विलासिता व वैभवपूर्ण जीवन के दिवास्वप्न दिखाने में संचार माध्यमों ने निर्णायक भूमिका निभाई । सिनेमा में भी उसका प्रभाव साफ देखा जा सकता है - विलासिता व वैभवपूर्ण जीवन शैली, ब्रांडेड उत्पादों का अत्यधिक उपयोग, विदेशी जीवनशैली का अनुकरण, विदेश यात्रा और यूज ॲण्ड थ्रो की प्रवृत्ति जो कि वस्तु से लेकर सिनेमा के पर्दे पर चित्रित सम्बन्धो तक में स्पष्ट दिखाई देती हैं ।''[37] देशी-विदेशों कंपनियों ने अपने फायदे

के लिए यहाँ लोगों में कृत्रिम आवश्यकताएँ पैदा की और उन्हें अपना माल खरीदने पर मजबूर किया । इस सबका परिणाम आज हमारे सामने है । आज लोगों को अपने जीवन में कई आर्थिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा है ।

भारत में पूँजी के अबाध आगमन से यहाँ की सामाजिक व सांस्कृतिक संरचना को भी एक सीमातक प्रभावित किया है । आज जीवन मूल्य तीव्रता से बदल रहे है, पूँजी के दबाव में सम्बन्धों में तनाव व टूटन की स्थिति उत्पन्न हो गई है, जिसका प्रतिबिम्ब साहित्य और सिनेमा दोनों में परिलक्षित हो रहा है । ''इधर हाल के वर्षों में हिंदी सिनेमा में निर्मित फिल्मों के कथ्य व भारतीय समाज में व्याप्त उथल-पुथल पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि भूमंडलीकरण के पश्चात् साम्प्रदायिकता व आतंकवाद को केन्द्र में रखकर जितनी प्रतिशत फिल्मों का निर्माण पिछले बीस वर्षों में हुआ है उतना आजादी के बाद के चालीस वर्षों में भी नहीं हुआ ।''[38] सिनेमा में आए कथ्य से तकनीक तक के परिवर्तन को हम इस समय देख सकते है । हिंदी सिनेमा ने पूँजीवादी मानसिकता, साम्प्रदायिकता, आतंकवाद, उपभोक्तावाद को महिमामंडित करते हुए फिल्म निर्माण कर दर्शकों की भावनाओं को उत्तेजित किया । सिनेमा के संदर्भ में भी यही पूँजीवादी विचारधारा अपना वर्चस्व स्थापित कर दर्शकों तक वही संदेश प्रेषित करना चाहती है । जिसमें उसके हित निहित हो । इस संदर्भ में सन् 1992 से सन् 2000 तक की फिल्मों पर दृष्टि डालना अधिक उपयुक्त होगा । भूमंडलीकरण के आरंभ से लेकर बीसवी सदी के अंत तक की हिंदी सिनेमा की यात्रा को यहाँ हम देखेंगे -

बीसवीं सदी के अंतिम दशक में साम्प्रदायिक हिंसा, नक्सलवाद एवं आतंकवाद पर केन्द्रित फिल्मों की संख्या में तीव्रता से बढोत्तरी हुई । 'रोजा', 'द्रोहकाल', 'बॉम्बे', 'नसीम', 'माचिस', 'दिल से', '1084 की माँ', 'सरफरोश', 'फिजा', 'गदर' आदि फिल्मों में हम इस बात को देख सकते है । इसी दशक में अपराधिक पृष्ठभूमि और माफियाओं पर भी हिंदी सिनेमा में बहुत सारी फिल्में बनीं । इसके पहले भी इस तरह की फिल्में बनी थी लेकिन सन् 1992 के बाद जिस प्रकार अपराधिक चरित्रों को महिमा मण्डित किया गया वह निश्चय ही गम्भिरता से सोचने का विषय है । इन फिल्मों में है - 'खलनायक', 'बाजीगर', 'क्रांतिवीर',

'विरासत', 'सत्या' आदि और आगे भी हम 'कंपनी', 'मकबूल', 'अपहरण', 'ओमकारा', 'सरकार', 'धूम', 'सरकार राज', 'गुलाल', 'गँग्स ऑफ वासेपुर' में इसी अपराधिक महिमा मण्डन की परम्परा को देखते है । ''इन फिल्मों में अपराधिक पृष्ठभूमि के चरित्रों को न केवल महिमा मंडित किया गया वरन उन्हें न्यायोचित ठहराने का प्रयास भी किया गया । दूसरे शब्दों में कहे तो इन चरित्रों को न केवल सामाजिक मान्यता देने की वकालत की गई वरन् उन्हें महान बनाने का भी भरसक प्रयास किया गया ।अपराध और अपराधियों को मान्यता दिलाने के इस उपक्रम के पीछे कौन सी विचारधारा काम कर रही है, यह सोचने का विषय है ।''[39]

नवउदारवाद के इस युग में हिंदी सिनेमा में पूँजी के अतिशय प्रदर्शन व विलासितापूर्ण जीवन शैली पर केन्द्रित प्रेमकथाओं की बाढ़ सी आ गई, जिनमें विदेशी लोकेशन्स, प्रवासी भारतीयों पर केन्द्रित कथाओं पर भी पर्याप्त फिल्में बनी । जैसे - 'हम आपके है कौन', 'दिलवाले दुल्हनिया ले जायेंगे', 'परदेश', 'दिल तो पागल है', 'कुछ कुछ होता है', 'हम दिल दे चुके सनम', 'कहो ना प्यार है' आदि । ''भूमंडलीकरण के पश्चात् हिंदी सिनेमा में प्रवासियों पर केन्द्रित फिल्मों का निर्माण न केवल तीव्रता से हुआ वरन् उनके प्रति एक नई दृष्टि विकसित हुई जिसने उनकी पूर्व छवि जो कि हिंदी सिनेमा में प्रायः पाश्चात्य जीवन शैली से प्रभावित मसखरे या अपराधी की थी, उसे भी बदल दिया । 1992 के पश्चात् हिंदी सिनेमा में भारतीय प्रवासियों की परिवर्तित छवि ने जनमानस को व्यापक रूप से प्रभावित भी किया ।''[40] सन् 1992 के बाद हिंदी सिनेमा में स्त्री एवं दलितों को केन्द्र में रखकर कुछ महत्वपूर्ण फिल्मों का निर्माण हुआ । जैसे - 'माया मेमसाब', 'दामिनी', 'समर', 'क्या कहना', 'दिक्षा' आदि ।

इस प्रकार भूमंडलीकरण के आरम्भ से लेकर बीसवीं सदी के अंतिम दशक की हिंदी यात्रा सराहनीय है ।

2.3.6 इक्कीसवी सदी में हिंदी सिनेमा -

इक्कीसवीं सदी में देश आतंकवाद, साम्प्रदायिकता तथा प्रांतीय हिंसा जैसे श्रापों से कलंकित हो गया । इसी सदी के प्रारम्भ में देश में सिनेमा के क्षेत्र में 'मल्टीप्लेक्स कल्चर' ने दस्तक दी । देश की युवा पीढ़ी पर उपभोक्ता संस्कृति का असर साफ-साफ झलकने लगा और बाजारवाद ने पूरी अर्थ संरचना को अपनी गिरफ्त में ले लिया । विज्ञापन की बढ़ती पकड़ ने फिल्म जगत को नई उँचाईयाँ और उम्मीदें प्रदान की । अब सिनेमा कॉर्पोरेट जगत के लिए एक सुरक्षित तथा फायदेमंद निवेश का स्थान बन गया । आर्थिक संकट के जो बादल फिल्म उद्योग पर छाये थे वे साफ हो गए । फिल्म उद्योग में आर्थिक सुरक्षा ने फिल्मकारों खास कर युवा फिल्मकारों में एक नई उर्जा का संचार किया । पहले की अपेक्षा अब वे ज्यादा खुलकर और विश्वास के साथ कार्य कर रहे हैं । सवा सौ करोड की आबादी में अब उन्हें हर प्रकृति के दर्शक मिल रहे हैं । परिणाम स्वरूप अब वे किसी भी पटकथा पर फिल्म निर्माण करने में खुद को ज्यादा स्वतंत्र पाते है । उस पटकथा को देखने समझने और सराहनेवाले दर्शक उपलब्ध हो ही जाते है । इसका प्रमाण ऐसी बहुत-सी विवादास्पद तथा डबल मिनिंग फिल्में हैं, जो पहले सिनेमाघरों में दर्शकों के लिए तरसती थी । परंतु आज ऐसी फिल्में किसी-न-किसी दर्शक वर्ग को प्रभावित कर ही लेती हैं । इन फिल्मों में 'याराना', 'वाटर', 'फायर', 'जिस्म', 'मर्डर', 'द ट्रेन', 'चमेली', 'सलाम नमस्ते', 'चांदनी बार' अनेक फिल्में शामिल है । ''इन फिल्मों के विषय समलैंगिकता, लिव-इन-रिलेशन, वेश्यावृत्ति, अनैतिक संबंध आदि ऐसे विषय जो कहीं-न-कहीं भारतीय समाज और संस्कृति पर आघात करते हैं । परंतु भारत का बदलता हुआ समाज किसी-न-किसी रूप में इन फिल्मों को भी स्वीकारोक्ति प्रदान करता हुआ नजर आता है ।''[41]

इक्कीसवी सदी के हिंदी सिनेमा में एक ओर प्रवासी भारतीयों को ध्यान में रखकर प्रेम की भव्य, मनमोहक अलिशान दुनिया रची जा रही थी । तो दुसरी ओर माफिया, हिंसा, प्रतिरोध का सिनेमा जिसमें भय और हिंसा जैसे नकारात्मक मूल्यों को इस्तेमाल किया जा रहा था । ''एन.आर.आई. प्रेम ग्लोबलाइजेशन के बाद के शहरी मूल्यों का सफल बिजनेस

मॉडल है । आज हर तरफ बाजार ही प्रभावी है । नए मनोरंजन बाजार की एक विशेषता उसका बाकी से अनूठा दिखना भी है । आकर्षित करने की क्षमता उसकी यू.एस.पी. बन जाती है । यही कारण है कि सामान्य जीवन से परे चकाचौंध से भरी ये फिल्में जनमानस पर छा जाती है ।''[42] निर्देशक यश चोपडा, करण जौहर, फराह खान, संजय लीला भंसाली की फिल्में ऐसी ही हैं । जैसे - 'कभी खुशी कभी गम', 'दिल चाहता है', 'कल हो न हो', 'क्रिश', 'कभी अलविदा न कहना', 'मैं हूँ ना' आदि । दूसरी तरफ इस दौर में राम गोपाल वर्मा, अनुराग कश्यप, विशाल भारद्वाज, राकेश मेहरा आदि ऐसे फिल्मकार है जिन्होंने प्रवासी भारतीय प्रेम के शानदार मनमोहक फार्म्यूले को खारीज कर सामाजिक ढाँचे में हिंसा के नए यथार्थ पर आधारित कथाओं एवं शिल्प के नये रूपों के उपयोग का रास्ता चुना है । ''हिंसा, सेक्स तथा रिश्तों के तनाव हिंदी फिल्मों की मुख्यधारा में कोई नया प्रयोग नहीं है किंतु इन फिल्मकारों के यहाँ इसकी गति अंकन ट्रीटमेंट तथा कोण में नए अर्बन समाज के उपकरण प्रयोग में लाए जाते हैं । नए समाज के चौंकाने की शक्ति का 'शॉक' देने की कला का जो महत्व है वह इन्हें बाकी फिल्मकारों से उलेग कर देता है ।''[43] रामगोपाल वर्मा की 'डी.कंपनी', 'भूत', 'सरकार', 'निशब्द', 'नए शोले', विशाल भारद्वाज की 'कमिने', 'इश्किया', पंकज कपूर अभिनित मकबूल, मनोज वाजपेयी अभिनित 'शूल', अजय देवगण की 'हल्ला बोल', 'वन्स अपान ए टाईम इन मुंबई' आदि ऐसी ही फिल्में है । मुंबई अंडरवर्ल्ड से जुडे विषय पर महेश मांजरेकर ने संजय दत्त को लेकर 'वास्तव' फिल्म बनाई। 'राजनीति' में परिवारवाद, वंशवाद को प्रकाश झा ने 'राजनीति' फिल्म में प्रस्तुत किया है । ऐसे ही राजनीति पर बनी अनुराग कश्यप की फिल्म 'गुलाल' छात्र राजनीति के बहाने मौजूदा राजनीतिक बदरंगता को आईना दिखाती है । इसी प्रकार राजनीति में नौजवानों के इस्तेमाल की ओर इशारा करती हुई मणिरत्नम की फिल्म 'युवा' भी कई प्रश्न उपस्थित करती है । विशाल भारद्वाज की 'ओमकारा' भी इस विषय को बेहतर तरीके से उठाती है । सुधीर मिश्रा की 'इस रात की सुबह नहीं' में कॉलेज कैम्पस में राजनीति के बीजारोपन की विषमता दिखाई गई । राकेश मेहरा की 'रंग दे बसंती' का विषय ऐसे ही युवा है । 'थ्री इडियट' में माता-पिता चाहते है कि बच्चे उनकी अधुरी महत्वाकांक्षाओं को पूरा करें । बच्चे की रूचि की

चिंता न करते हुए उस पर अपनी पसंद एवं अव्वल आने की गलाकाट प्रतियोगिता में जबरदस्ती धकेलते रहते हैं और जब वे आत्महत्या कर लेते हैं तो सिर पकडकर रोते हैं अथवा यदि वो विद्रोह करते हैं तो उन्हें उद्दंड की उपाधि देते हैं । आमिर खान ने 'थ्री इडियट' में बड़ी सच्चाई से इस समस्या को मनोरंजनात्मक तरीक से उठाया है । इसी प्रकार 'तारे जमीं पर' के रूप में आमिर खान एक ऐसी फिल्म सामने लाये जिसने 'पैरेंट्स' को सोचने पर मजबूर किया । यह एक ऐसी फिल्म है जिसने दर्शकों के एक विशाल वर्ग को किसी-न-किसी रूप में प्रभावित किया है ।

इसी प्रकार सादगी से अपनी बात कहती श्याम बेनेगल की 'वेलकम टू सज्जनपुर' अपने नये प्रयेग के लिए हमेशा याद की जाएगी । ए वेडनसडे, 'ब्लैक फ्राइडे', 'रेनकोट', 'ब्लैक एंड व्हाईट', 'लागा चुनरी में दाग', 'इकबाल' ये फिल्में सशक्त पटकथा का नमुना है। इसी क्रम में लीक से हटकर बनीं कुछ प्रमुख फिल्में जिन्हें व्यावसायिक सफलता उतनी नहीं मिली किंतु इन फिल्मों में निर्देशकों ने वर्तमान हालात पर सीधे प्रहार किये है । वे फिल्में है - 'हजारों ख्वाहिंशे ऐसी', 'एक चालीस की लास्ट लोकल', 'टैंगो चार्ली', 'दस कहानियाँ', 'मुम्बई एक्सप्रेस', 'रामचन्द्र पाकिस्तानी', 'वेलडन अब्बा', 'अग्निवर्षा', 'सुर', 'माई ब्रदर निखिल', 'बीइंग सायरस', 'मि.एन्ड मिसेस अय्यर', 'खोसला का घोंसला', 'मिशन इस्तांबुल', 'ट्रैफिक सिग्नल' आदि । ''इक्कीसवी सदी के प्रथम दशक और उसके बाद ऐसी कई महत्वपूर्ण फिल्में बनीं जो हमारे सामाजिक ताने-बानें में व्याप्त बुराइयों को उजागर करती है और हमारी व्यवस्था पर प्रश्नचिह्न खड़ा करती हैं । यही वह सिनेमा है जो हमें झकझोरता हैं, सोचने पर मजबूर करता हैं । समाज और देश के प्रति अपने दायित्वों को निभाने के लिए यही सिनेमा एक शक्ति बनकर सामने आता है । सामाजिक ताने-बानें और बुराईयों को उजागर करती अनेक ऐसी फिल्में आयी जिन्होंने समसामयिक दर्शन और सामाजिक व्यवस्था के व्यावहारिक पहलुओं की अमिट छाप छोड़ी । जिसमें - 'लगे रहो मुन्नाभाई', 'गंगाजल', 'अपहरण', 'लज्जा', 'रंग दे बसंती', 'पेज थ्री', 'तारे जमीन पर', 'जेल', 'आरक्षण', 'राजनीति', 'पानसिंह तोमर' आदि ।''[44]

इक्कीसवीं सदी के शुरूआती दशक में हिंदी निर्देशकों ने ऐतिहासिक फिल्में भी बनाई जिसमें शाहरुख खान ने 'अशोका', आशुतोष गोवारीकर ने 'जोधा अकबर', अकबर खान ने 'ताजमहल', 'उमराव जान' बनाई । इन फिल्मों में 'जोधा अकबर' को सबसे ज्यादा सफलता मिली । क्रांति के सिपाहियों को, लेकर राजकुमार संतोषी की 'लीजेंड ऑफ भगत सिंह', अमिर खान की 'मंगल पांडे' आदि । इसी दशक में हास्य-व्यंग्य फिल्मे भी आयी । निर्देशक प्रियदर्शन की 'हंगामा', 'हलचल', 'भागमभाग' । पैसों के पीछे भागते नौजवानों की स्पर्धा को दिखाती ये अच्छी हास्य फिल्में है । इसी विषय पर 'मालामाल विकली', 'ओए लक्की लक्की ओए' आदि फिल्में भी आयी । रोहीत शेट्टी की 'गोलमाल सीरिज', प्रियदर्शन की 'हेराफेरी सीरिज', राजकुमार हिरवानी की 'मुन्नाभाई सीरिज' हँसते-हँसते गंभीर करनेवाली फिल्में है । अन्य हास्य फिल्में हैं - 'दीवाना पागल', 'यमला पगला दिवाना', 'मस्ताना', 'मान गए मुगले आझम', 'नो एंट्री', 'दिल तो बच्चा है जी', 'डबल धमाल' आदि ।

इस तरह हम देखते हैं कि इक्कीसवीं सदी में सिनेमा के कथ्य, शिल्प और तकनीक में बहुत सारे परिवर्तन हुए है । जैसे समाज बदल रहा है... वैसे ही सिनेमा भी बदल रहा है। ''सिनेमा को लेकर दर्शकों की बढ़ती जागरूकता के मद्देनजर फिल्मकारों ने विगत कुछ वर्षों मे बदलाव को तरजीह दी है । हिंदी की फिल्मों में इधर कुछ ज्यादा ही प्रयोग नए पुराने फिल्मकारों ने किए है । सिनेमा की यह बदलाव के लिए प्रतिबध्द कला अपने समय की विरूपताओं के खिलाफ प्रतिरोध खड़ा करने और भविष्य के यथार्थ की झलक को सामने लाकर बदलाव की प्रेरणा को बलवती बनानेवाली कला अपनी अभिव्यक्ति की नई शैली ईजाद करती है और भविष्य के स्वर्णिम होने की उम्मीद जगाती है ।''[45]

2.4 निष्कर्ष -

उन्नीसवीं सदी के अंत में सिनेमा का उद्‌भव फ्रान्स में हुआ और आज इक्कीसवी सदी के दूसरे दशक में उसका फैलाव दुनिया के कोने कोने में हो चुका है । यह अपने आप में एक विस्मयकारी रोमांचक और गौरवमयी बात है । सिनेमा विज्ञान का एक अनूठा अविस्कार है । सभी कलाओं को साथ लेकर चलने वाला सिनेमा कोई जादुई शक्ति से कम

नहीं है । करीबन सवा सौ साल की उम्र में सिनेमा ने पूरी दुनिया में अपना जलवा बिखेरा है। सिनेमा ने मनोरंजन के साथ साथ समाज-परिवर्तन का भी कार्य किया है । सिनेमा के सम्मोहन से आज दुनिया का कोई भी राष्ट्र अछूता नहीं है । दुनिया की अधिकांश आबादी को सिनेमा ने प्रभावित किया है । सारी दुनिया इसका लोहा मान चुकी है । इससे हम अंदाज लगा सकते है कि सिनेमा का विकास कितनी तेज रफ्तार से हुआ है ।

भारत में सिनेमा के उद्‌भव के पश्चात् उसका विकास होता चला गया । अपने विकासक्रम में हिंदी सिनेमा को कई पड़ावों से गुजरना पड़ा । स्वतंत्रतापूर्व हिंदी सिनेमा का काल सामाजिक चेतना उपलब्धियों एवं सामाजिक सरोकारों के प्रति आस्था का काल था । इसी से हिंदी सिनेमा की एक विशिष्ट पहचान बन चुकी थी । गीत-संगीत की समृध्द परंपरा भी यहीं से शुरू हुई । स्वातंत्र्योत्तर हिंदी सिनेमा का काल आजादी के मोहभंग का काल है । जिसकी स्पष्ट प्रतिध्वनि तत्कालीन सिनेमा में सुनी जा सकती है । हिंदी सिनेमा के विकासक्रम में 'समानांतर सिनेमा' एक अत्यंत महत्वपूर्ण पडाव है । 'समानांतर सिनेमा' ने देश और दुनिया में भारतीय सिनेमा को एक नई पहचान दिलाई । कई राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रिय पुरस्कारों पर समानांतर सिनेमा ने मुहर लगाई।

मुख्यधारा का हिंदी सिनेमा सत्तर के दशक से बदलने लगा । इसी समय 'अँग्री यंग मॅन' के रूप में हिंदी सिनेमा के महानायक अमिताभ बच्चन का फिल्मी सफर शुरू हो चुका था । उनकी फिल्मों ने लंबे समय तक दर्शकों के दिल पर राज किया । हिंदी सिनेमा के विकासक्रम में व्यावसायिक या मुख्यधारा के हिंदी सिनेमा का योगदान भी कम महत्वपूर्ण नहीं है । भूमंडलीकरण के आरम्भ के हिंदी सिनेमा में पूँजी के अतिशय प्रदर्शन और विलासितापूर्ण जीवन शैली पर केन्द्रित प्रेमकथाओं की बाढ़ सी आ गई । जिनमें प्रवासी भारतीयों पर भी बहुत सारी फिल्में बनीं । इक्कीसवी सदी में हिंदी सिनेमा के कथ्य, शिल्प और तकनीक में आमूलचूल परिवर्तन हुआ ।

इस प्रकार हिंदी सिनेमा के विकासक्रम का सिलसिला जारी है । आज भारत एक ऐसा देश बन चुका है जहाँ सबसे ज्यादा फिल्मों का निर्माण होता है । औसतन एक हजार

फिल्में हर वर्ष बनती हैं । फिल्में देखने वालों की संख्या रोजाना करोडों में आँकी गई है । भारतीय सिनेमा का बाजार प्रतिवर्ष करीब ढ़ाई अरब अमेरीकी डॉलर आँका गया है । हिंदी या बॉलिवुड सिनेमा आज भारतीय सिनेमा की पहचान बन गया है ।

संदर्भ सूची :

1) साहित्य और सिनेमा के अंतर्संबंध - नीरा जलक्षत्रि, पृ. 38

2) भारतीय सिनेमा एक अनन्त यात्रा - प्रसून सिन्हा, पृ. 21

3) वही, पृ. 21

4) वही, पृ. 23

5) वही, पृ. 25

6) वही, पृ. 26

7) सौ बरस के सिनेमा का सुहाना सफर - पाण्डे एवं सिरसाट ('मीडिया विमर्श', सिनेमा विशेषांक - 3, जून 2013), पृ. 67

8) भारतीय सिनेमा एक अनन्त यात्रा - प्रसून सिन्हा, पृ. 28

9) वही, पृ. 34

10) वही, पृ. 36

11) वही, पृ. 37

12) वही, पृ. 41

13) वही, पृ. 44

14) वही, पृ. 47

15) हिंदी सिनेमा के 100 वर्ष - दिलचस्प, पृ. 16

16) वही, पृ. 17

17) साहित्य और सिनेमा के अंतर्संबंध - नीरा जलक्षत्रि, पृ. 49

18) वही, पृ. 51

19) वही, पृ. 52

20) वही, पृ. 54

21) भारतीय सिनेमा एक अनन्त यात्रा - प्रसून सिन्हा, पृ. 102

22) वही, पृ. 104

23) वही, पृ. 104

24) वही, पृ. 106

25) वही, पृ. 107

26) वही, पृ. 111

27) वही, पृ. 114

28) वही, पृ. 116

29) वही, पृ. 120

30) वही, पृ. 126

31) वही, पृ. 127

32) वही, पृ. 143

33) वही, पृ. 129

34) वही, पृ. 138

35) हिंदी साहित्य और सिनेमा - विवेक दुबे, पृ. 100

36) साहित्य और सिनेमा के अंतर्संबध - नीरा जलक्षत्रि, पृ. 62

37) वही, पृ. 62

38) वही, पृ. 63

39) वही, पृ. 64

40) वही, पृ. 65

41) सामाजिक परिदृश्य और व्यावहारिक अंतर्मन - धरवेश कठेरिया ('मीडिया विमर्श', सिनेमा विशेषांक - 3, जून 2013), पृ. 82

42) भारतीय हिंदी सिनेमा की विकास यात्रा - डॉ. देवेन्द्रनाथ सिंह, डॉ. वीरेन्द्र सिंह यादव, पृ. 305

43) वही, पृ. 306

44) सामाजिक परिदृश्य और व्यावहारिक अंतर्मन - धरवेश कठेरिया (मीडिया विमर्श सिनेमा विशेषांक - 3, जून 2013), पृ. 83

45) भारतीय हिंदी सिनेमा की विकास यात्रा - डॉ. देवेन्द्रनाथ सिंह, डॉ. वीरेन्द्र सिंह यादव, पृ. 314